होशंगाबाद विज्ञान

अंक : 18

अक्टोबर, 1985

इस अंक में

1. नई शिक्षा : माफ करें, कुछ कहना है 2. अच्छे या बुरे विद्यार्थी कौन रचता है ? 3. बच्चे कैसे सीखते हैं ? 4. शिक्षा क्यों : एक शिक्षक के विचार 5. पुरस्कार के हकदार (लघु कथा) 6. कंजर, शिक्षा और समाज 7. मेरे प्रिय शिक्षक 8. सामाजिक अध्ययन : एक प्रयास 9. उत्पादन (नाटक) 10. सवालीराम (विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम) 11. अनुवर्तन 12. उसका स्कूल (कहानी) 13. प्रश्नों के नमूने 14. गणित परियोजना 15. बाल केन्द्रित पाठ्यक्रम कैसा ? 16. भाषा और भाषा विज्ञान 17. प्रदूषण के शिकंजे में 18. संक्रामक रोग : नारू 19. गेहूँ ने रंग बदला 20. पहेलियाँ 21. कविता

चित्रकार : परवेज खान □ मदन व्यास □ अमर यादव □ वाणी भाटिया

पाठक लिखते हैं.....

श्रीमान्,

सवालीराम भाई आपको मैवासा से मुकेशचन्द्र शर्मा का नमस्ते मालूम होवे। आगे समाचार यह है कि हम आपकी बालवैज्ञानिक को देखकर बहुत प्रसन्न हुए। अगर कभी जनरल प्रमोशन नहीं होता तो हमें विश्वास था कि हम आपकी बालविज्ञान की परीक्षा में फर्स्ट डिवीजन पास होते। दूसरी बाल विज्ञान का हम विद्यार्थी को मौका दें। सवालीराम भाई किसी भी हालत में आप पत्र डालें, आपके पत्र के इन्तजार में।

—मुकेशचन्द्र शर्मा, नामली

श्री सवालीरामजी,

आपकी बालवैज्ञानिक पुस्तक मुझे बहुत ही खराब लगी। आपको शिक्षा अधिकारी किसने बनाया, आप तो पूरे पागल के पागल है। अगर मैं मंत्री होता तो तुम्हें कभी नौकरी न देता। तुम फस क्लास खूसट हो।

धन्यवाद

पगलों के अधिकारी को हटाओ, सवालीराम मुर्दाबाद

आदरणीय सवालीराम जी,

सादर वन्दे।

आपके द्वारा लिखी विज्ञान आज के विद्यार्थियों के लिए एक वरदान सिद्ध हो सकती है, बशर्ते उसे आज-कल के शिक्षक मन लगाकर अध्ययन करायें तथा इस विज्ञान में दिये गये अध्यायों की गहराई से बच्चों को अवगत करायें। परन्तु दुख की बात है कि, आजकल केवल नाम पूरा करने के उद्देश्य से ही पढ़ाई कराई जाती है और ऐसे में इस विज्ञान के रचना करने की कल्पना को पूरा साकार करने में कठिनाई होती है। यहाँ तक कि आपकी विज्ञान में प्रश्न तो दिये गये हैं और उत्तर नहीं दिये हैं और बच्चों को खुद ही उत्तर देने को कहा गया है। यह एक हद तक सही है परन्तु सही या गलत उत्तर की जांच शिक्षक को पूरे लगन तथा ईमानदारी से करना चाहिये।

सधन्यवाद। पत्र का उत्तर अवश्य देवें।

—जे. पी. गौड़, सोहागपुर

आदरणीय सवालीराम जी,

नमस्ते

आपके द्वारा लिखी गई विज्ञान मैं मन और लगन से पढ़ता हूँ। आपके द्वारा लिखी विज्ञान बहुत अच्छी लगी। हम परिभ्रमण पर जाते हैं। हमें विज्ञान में बहुत मजा आता हैं। बहुत-सी चीजें समझ में नहीं आती। यहाँ पर प्रयोग नहीं कराए जाते।

—नवीनकुमार गौड़, सोहागपुर

उपरोक्त कुछ उदाहरण है उन चिट्ठियों के जिनमें सवालीराम को होशंगाबाद विज्ञान प्रशिक्षण कार्यक्रम के बारे में लिखा गया है। कुछ चिट्ठियाँ अभी हाल ही की हैं और कुछ काफी पहले की। शायद इस प्रकार के मत व्याप्त हैं सभी लोगों में जहाँ खुशी इस बात को है कि कुछ लोग इन्हें व्यक्त करते हैं, वहीं एक आग्रह भी है। जो भी व्यक्ति पत्र लिखें कृपया अपना नाम व पता जरूर लिखें, जिससे कि संवाद जारी रह सके। आलोचना, समालोचना व तारीफ जो भी आप के मत हैं, सब इस कार्यक्रम के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालते हैं। किन्तु नाम न लिखनेसे दुविधा हो जाती है। ऐसा लगता है कि इस व्यक्ति में आलोचना करने का साहस तो है परन्तु अपने मतों को स्वीकारने का नहीं। एक और आग्रह, जो लोग मत व्यक्त करें उस मत के साथ कुछ आधार भी दें। कुछ त्रुटियाँ, कुछ खूबियाँ बताएँ जिससे कि कार्यक्रम को बेहतर बनाने में मदद मिल सके। होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम सतत परिवर्तनशील शिक्षण में कार्यक्रम को स्थापित करने की कोशिश है। पिछले 12 सालों में आलोचकों की पैनी आलोचना व तीखे कथनों ने इस कार्यक्रम को बहतर बनाने में बहुत अहम भूमिका निभाई है। यह भी है कि आलोचना में बताई बहुत सी बातों को स्वीकारा नहीं गया है पर उन पर बहस जारी है। इसलिए अति आवश्यक है कि बुरा-भला कहने की बजाए यह बात सामने आए कि इसमें क्या कमजोरियाँ हैं और क्या खूबियाँ। इन पत्रों में लिख विचारों के बारे में बहुत कुछ कहा जा सकता है लेकिन वह अभी नहीं; शायद आप में से कुछ इनके बारे में मुझे लिखें। लेकिन आग्रह यही है कृपया अपनी पहचान दें और अपने विचारों का आधार स्पष्ट करने की यथासम्भव कोशिश करें।

—सम्पादक

नई शिक्षा : माफ करें, कुछ कहना है

आजकल नई शिक्षा नीति पर बहस चल ही रही है अतः इस सम्बन्ध में शिक्षाविदों और शिक्षा में रुचि रखने वालों के विचार पेश करना मौजू होगा । हम पाठकों से अपेक्षा करते हैं कि वे भी इस संबंध में अपने विचार लिखकर हमें भेजें। यहां प्रस्तुत है राजस्थान के जाने माने लेखक श्री मालीराम शर्मा के विचार ।

फ़िजाँ में एक फुसफुसाहट है कि नई शिक्षा आयेगी। शिक्षा में आमूल चूल परिवर्तन की बात हो रही है। कुल मिलाकर सारी बातों का सार यही है कि मौजूदा ढांचा बदला जाये। पुराना ढांचा चरमरा गया है और उसकी जगह चाहिये एक ऐसा मजबूत ढांचा, जो आज की समस्याओं का सामना कर सके। जल्दी ही बात का दौर शुरू होगा, चर्चा चलेगी और चर्चा पर परिचर्चा। बात में भागीदार सभी होंगे, अध्यापक, अभिभावक समाजशास्त्री और सरकारी नुमाइन्दे।

खैर, संवाद शुरू होगा तो फिर पूरी बहसबाजी, तर्क चलेंगे, तरकश में रखे सारे तीर चलेंगे, पक्ष में भी और विपक्ष में भी। मौजूदा शिक्षा प्रणाली की अकर्मण्यता व नपुंसकता की बात होगी, दलीलें आयेंगी कि इसे दफना दिया जाये, परन्तु इससे भी काम नहीं चलेगा। सवाल खड़ा होगा कि ये ढांचे का स्वरूप क्या हो, और उस पर भी अहम सवाल होगा कि क्या ग्यारन्टी कि नया ढांचा सक्षम होगा, नये जमाने में योग-क्षेम वहन करने में पूरा समर्थ होगा। चलो बात करें।

गीता में कृष्ण ने कहा कि 'कालो-स्मि' यानी मैं समय हूँ। मैं समय बनकर संसार को नष्ट करता हूँ। इस विश्व की कोई चीज कालातीत नहीं, समय सबको नष्ट करता है, शाश्वत है तो सिर्फ समय ही। आज की शिक्षा समय के साथ कदम मिलाकर नहीं चल पा रही है। जो समय के साथ कदम मिलाकर नहीं चल पाते उन्हें फजीहत के दौर से गुजरना पड़ता है, शिक्षा इसका अपवाद नहीं।

भूत के व्यामोह में पहले कुछ लोग अतीत की बात करते हैं, एक भावुकता के साथ जैसे कि उन जमानों में धरती पर स्वर्ग उतर आया हो। मान लो, नालन्दा और तक्षशिला अपने जमानों में कुछ रहे हों पर आज के संदर्भ में बेमाने है। समय की घड़ी आगे चलती है, पीछे नहीं। समय के प्रवाह में ठहराव नहीं, सब कुछ बह जाता है, रवानियाँ भी और जवानियाँ भी।

समय का स्वरूप समझने के लिये घड़ी की सुइयाँ उल्टी घुमाओ और 450 वर्ष पुराने जमाने में उतरो। सिर्फ छापाखाना आया था। तसब्बुर करो 450 वर्ष पुरानी दुनिया का, जिसमें न तार, न रेल, न हवाई-जहाज, सिनेमा व दूरदर्शन तो कल्पना से परे की चीज। आज परिवर्तन इस द्रुत गति से हुए हैं कि हमारे सामने हमारे पूर्वजों से अधिक समस्यायें हैं। शिक्षा का मतलब यदि जीवन की तैयारी है तो आज का जीवन जीने के लिये कैसी शिक्षा चाहिये ?

नयी शिक्षा एक दम नई हो या परिवर्द्धित संस्करण, यह एक विचारणीय बिन्दु है। भारतीय संदर्भ में जब नई शिक्षा के स्वरूप निर्धारण की बात चली तो कुछ पदासीन दिग्गजों ने टीका-टमका (टीका-टिप्पणी) करके शिक्षा का नया मॉडल पेश कर दिया, जमाना कोस्मेटिक्स का है। कुछ चेहरों पर बोदापन नजर आया तो प्लास्टिक सर्जरी कर दी। शिक्षा के ये कर्मकाण्डी पंडित लोग पुराने शब्दों पर चमक चढ़ा देते हैं और बोदे सिक्के को एक चमचमाहट के साथ पेश करने की कला जानते हैं। देखने वाले को लगता है कि मानो यह ब्राण्ड न्यू सिक्का अभी ताजा-ताजा ही टकसॉल से आया है।

10 + 2 की योजना ने कई रंग दिखाये, यह एक परिवर्तनकारी योजना थी, परन्तु कॉलिजों और विश्वविद्यालयों की भीड़ की छंटनी न हुई। न 10 + 2 एक "टर्मीनल प्वाइंट" बन पाया।

आखिर उन घोषणाओं का क्या हुआ जिसमें कहा गया था, हायर सेकेण्डरी परीक्षा एक मंजिल होगी, न कि बीच का पड़ाव। विश्वविद्यालय और कॉलिजों में तो वही लोग आयेंगे जिन्हें पढ़ना है। उद्देश्यहीन भीड़ हट जायेगी।

आजादी के बाद यह सोचा गया कि आजाद हिन्द में शिक्षण का नया स्वरूप बने, मुदालियर कमीशन बना और स्कूली शिक्षा में बहुद्देशीय स्कूलों की सिफारिश की। उच्च माध्यमिक स्कूल 11वीं कक्षा तक पढ़ाई करायेंगे। आठवीं कक्षा के बाद तीन वर्ष का पाठ्यक्रम होगा। अन्त में एक सार्वजनिक परीक्षा होगी। स्कीम लागू की गई। बहुउद्देशीय योजना खतम हुई। केवल माध्यमिक परीक्षा रह गई। इसमें भी तरमीम। सेकण्डरी अलग। दो सार्वजनिक इम्तिहान। आखिर इससे हासिल क्या हुआ? जिस जोश-खरोश से मुदालियर कमीशन ने हायर सेकण्डरी की स्कीम की सिफारिश की थी वह कितनी क्रान्तिकारी साबित हुई? पहले हाईस्कूल की परीक्षा होती थी, फिर इन्टरमीडिएट, फिर बी.ए., शुद्ध अंकगणित में इसे 10 + 2 + 2 = 14 स्कीम कह सकते हैं और मुदालियर कमीशन के अनुसार गठित हुई 10 + 1 + 3 = 14 यह था क्रान्तिकारी परिवर्तन। पहले दसवीं, बारहवीं और चतुर्थ वर्ष बी.ए.की सार्व-

जनिक परीक्षा होती थी और अब हर साल सार्वजनिक परीक्षा। इसमें शैक्षणिक दृष्टि से कौन सी क्रान्तिकारी बात हुई? खोदा पहाड़ निकली चुहिया।

इसके अलावा मुदालियर कमीशन ने बड़े विश्वास दिलाये थे कि हायर सेकण्डरी की परीक्षा अपने आप में एक मंजिल होगी, पर यह बात भी कहाँ हुई? डॉक्टरी व इंजीनियरिंग में जाने वाले विद्यार्थियों को एक साल के लिये कॉलेज में जाना पड़ता है तब इण्टरमीडियेट के सोपान को तोड़ने में तुक क्या थी?

जब नई शिक्षा की बात चलती है तो एक आशंका होती है कि कहीं नई शिक्षा की भी दुर्गति न हो जाये। हमने मुदालियर कमीशन और कोठारी कमीशन का हश्र देखा है।

आखिर, नई शिक्षा से हमारी परिकल्पना क्या है?

कोई जमाना था जब तब्दीलियां नाममात्र को होती थीं। जीवन मन्थर गति से चलता था, पर आज आपने जो गणित स्कूल में पढ़ी वह बेकार हो गई, जीव विज्ञान में पुरानी मान्यताएँ गलत हो गईं, इतिहास के बारे में दृष्टि ही बदल गई। पुराने जमाने में शिक्षा में एक परम्परा का निर्वाह होता था। बात-बात में पुराने उद्धरण पेश होते थे। अरस्तू ने यह कहा है, अफलातून ने यह कहा है और इनकी जीवन में सार्थकता होती थी, परन्तु आज के युग में बहुत सारी बातें बेकार हो गई हैं। ज्ञान की विस्फोटक स्थिति में पुरानी मान्यताएँ उखड़ गईं।

कहते हैं कि परशुराम ने कर्ण को श्राप दिया कि एन मौके पर तेरी विद्या तेरा साथ नहीं देगी। महाभारत के युद्ध में जब वह अर्जुन से लड़ रहा था तो उसकी विद्या उसके काम नहीं आई और नतीजा यह रहा कि कर्ण मारा गया। चलो, इस आख्यान को तो अलग छोड़ देते हैं, परन्तु जीवन के महाभारत में यदि पढ़ी-पढ़ाई विद्या काम न आये तो वह विद्या क्या काम आई? आपने बहुत कुछ पढ़ रखा है, माथे के अन्दर व ऊपर ज्ञान की गठरी रखी हुई है, आपके तूणीर (तरकस) में बहुत सारे तीर हैं पर जीवन के संघर्ष में काम नहीं आये तो फिर हुआ क्या? सिराजुद्दौला का ऐन मौके पर गन पाउडर गीला हो गया था। वह विद्या जो जीवन में जीवनरक्षा (सरवाईवल) में मददगार नहीं, सही माने में वह मरे हुए बन्दरिया के बच्चे की तरह है। उसे हम लटकाये हुए फिरते रहें, ताकि ज्ञान के कबाड़ी बन कर अपना कबाड़खाना चलाते रहें।

शिक्षा वही है जो जीवन में जीवन रक्षा के लिये व्यूह रचना सिखाये। पुराने जमाने में जीवन में चुनौतियाँ कम थीं और जो चुनौतियाँ या समस्यायें आती थीं वे कमोवेश रूप में वही होती थी जो हमारे से पहले वाली पीढ़ियों के सामने आई थीं। ऐसे अवसरों पर एक ही गुर काम करता "बड़े हुजूरों ने क्या किया?" मतलब कि हमारे से पूर्ववर्ती पीढ़ी ने क्या किया था? परन्तु आज नक्शा बदला हुआ है। प्रदूषण की समस्या हमारे पूर्वजों के सामने नहीं थी। वैज्ञानिक व तकनीकी तरक्की ने पर्यावरण में असन्तुलन पैदा कर दिया है, इन असन्तुलनों के बीच जीवित रहने के लिये हमें नई प्रकार की व्यूह रचनाएँ करनी पड़ेगी। इसके लिये हमें नई शिक्षा की आवश्यकता है।

नई शिक्षा में हमें सीखना भी है और भूलना भी है। बहुत सारी मान्यताएँ जो आज के संदर्भ में अप्रसांगिक हो चुकी हैं, भूलनी होंगी। सांस्कृतिक विरासत के रूप में बोझ नहीं ढोया जा सकता।

हम इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर रहे हैं, हमारी मानसिकता को उसी के अनुरूप ढालना होगा। बैलगाड़ी की एक मानसिकता होती है, बोइंग की अलग, दोनों में सामंजस्य नहीं।

कम्प्यूटर व तकनीकी युग में जीवित रहने के लिये आवश्यक होगा कि हमारा दृष्टिकोण वैज्ञानिक हो, तर्कसम्मत हो। हमारा परिवेश मानवीय हो, मानवीय जीवन-मूल्यों में विश्वास हो, मानवीय गरिमा के कायल हों। इस प्रकार के परिवर्तन न ला सके तो हम अस्तित्व खो बैठेंगे। इतिहास के दौर में ऐसा कई बार हुआ है। मिश्र, बाबल वगैरह में भी लोग रहते थे। इतिहास में सभ्यताओं के नाम से उनकी पहचान है, पर उनका हश्र क्या हुआ? उनका गुनाह इतना ही था कि समय के साथ बदले नहीं।

नई शिक्षा की आवश्यकता अपरिहार्य है, वर्ना यह देश सिर्फ भौगोलिक अर्थ में ही रह जायेगा, राजनैतिक अर्थ में इसका सार्वभौम सत्ता के रूप में आधुनिक राष्ट्र का वजूद खतरे में पड़ जायेगा। इन खतरों से बचाने के लिये नई शिक्षा की आवश्यकता है।

अगर नई शिक्षा के स्वरूप-निर्धारण का जिम्मा शिक्षा के क्षेत्र में काम करने वाली कर्मकाण्डी मण्डली को दे दिया गया तो फिर भगवान ही मालिक है। कर्मकाण्डी लोगों की अपनी कार्यप्रणाली होती है। वे ढांचा तैयार कर सकते हैं पर ढांचे में जान फूंकना उन्हें आता नहीं।

–'नया शिक्षक से साभार'

जब मैं बच्चा था, मुझे फालतू चीजों से खिलौने बनाने में और अपनी कल्पना से खेल ईजाद करने की आजादी थी। मेरे आनन्द में मेरे साथियों की पूरी हिस्सेदारी थी, सच तो यह है कि मेरे खेलों का पूरा मजा मेरे साथियों की हिस्सेदारी पर निर्भर था। एक दिन हमारे बचपन के स्वर्ग में वयस्कों की व्यवसायिक दुनिया के एक प्रलोभन ने प्रवेश किया। हमारे एक साथी को किसी विलायती दूकान से लाया गया खिलौना दिया गया। खिलौना अद्वितीय था–खूब बड़ा और सजीव। हमारे साथी में खिलौने का घमण्ड आ गया, खेल से उसका मन कुछ हट गया। उस मंहगी चीज को वह हम से सावधानी पूर्वक बचाकर रखने लगा। उसके पूर्ण स्वामित्व में मस्त होकर खुद को अपने को साथियों से श्रेष्ठ समझने लगा क्योंकि हमारे खिलौने सस्ते थे। . . . इस प्रलोभन ने एक चीज को ढांप दिया जो खिलौने से ज्यादा अद्वितीय थी–एक आदर्श बच्चे की झलक को।

–रवीन्द्रनाथ ठाकुर
"सभ्यता और प्रगति"

अच्छे या बुरे विद्यार्थी कौन रचता है ?

पिग्मेलियन इन द क्लास रूम : राबर्ट रोसेन्थाल आदि द्वारा रचित पुस्तक के आधार पर मारियला रिधिनी के लेख का भावानुवाद। अनुवाद सुष्मिता बनर्जी ने किया है, इन्होंने कर्नाटक एवं राजस्थान में प्रौढ़ शिक्षा एवं पूर्व प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में कई प्रयोग किये हैं।

मनोविज्ञान के एक अमरीकी प्राध्यापक राबर्ट रोसेन्थाल को पता नहीं क्या सूझा कि उन्होंने अपने बारह छात्रों को बुलाकर, हरेक को पाँच भूरे चूहे सौंप दिये। उनसे कहा कि दो एक हफ्तों में चूहों को भूल भुलैये में से रास्ता ढूंढ़ निकालना सिखाओ। मनोविज्ञान के क्षेत्र में सीखने-सिखाने की प्रक्रिया को समझने के लिए इस प्रकार के प्रयोग साधारणतः किये जाते हैं। पर इस प्रयोग में फर्क था और वह काफी अहम फर्क था।

रोसेन्थाल ने छः छात्रों से धीरे से फुसफुसाते हुए कहा कि उनको दिये गये चूहे खासतौर से चुने गए थे, उन चूहों में दिशा बोध विकसित था इसी प्रकार अन्य छः छात्रों के कानों में भी एक बात कही कि उनको दिये गये चूहों के साथ सफलता की उम्मीद कम या नहीं के बराबर है क्योंकि उन चूहों में जन्मगत खामियां हैं।

असल में ऐसा फर्क सिर्फ छात्रों के दिमाग में बोया गया जबकि सभी चूहे प्रत्येक दृष्टि से बराबर और एक से थे। जब प्रशिक्षण अवधि समाप्त हुई तो रोसेन्थाल ने पाया कि जिन चूहों का गुणगान किया गया था, उनके नतीजे अच्छे थे और जिनके लिए निराशा व्यक्त की गई थी वे जरा भी आगे नहीं बढ़ पाये थे। ऐसे परिणाम से उत्साहित होकर रोसेन्थाल इसी प्रयोग को एक दूसरे क्षेत्र में करना चाहते थे। स्कूल में यह एक अजीब वाक्यात बना

लाटरी:–

मई 64 में राबर्ट रोसेन्थाल और उनका दल एक शाला में जा पहुँचा जो दक्षिण सेन-फ्रांसिसको में थी। यह एक गरीब इलाका था जहाँ लोगों को कम वेतन मिलता था और कई परिवार सरकारी कल्याण कार्यों पर आश्रित थे, ऐसे इलाकों के बच्चों के बारे में आमतौर पर यह माना जाता है कि वे स्कूल में ज्यादा अच्छा नहीं कर पाते क्योंकि उनका सामाजिक पर्यावरण एक विकलांग-सा है जिसके कारण वे स्कूल में पिछड़े रहते हैं।

रोसेन्थाल और उसके साथियों ने स्कूल में बताया कि वे हावर्ड (अमेरिका के प्रसिद्ध विश्वविद्यालय) द्वारा संचालित एक विस्तृत अध्ययन में भाग ले रहे हैं जिसके लिए वित्तीय सहायता राष्ट्रीय विज्ञान संस्थान ने दी है और यह अध्ययन देर से विकसित होने वाले छात्रों की प्रगति पर है। ऐसे बड़े-बड़े ऊँचे शैक्षिक जाति गोत्र के नाम सुन शिक्षक प्रभावित हुए और उनकी कक्षाओं के दरवाजे उनके स्वागत में फटाफट खुल गये पर शिक्षकों को यह मालूम नहीं था कि अनुसंधान की विषय-वस्तु वे स्वयं हैं या छात्र। उनसे जो योगदान चाहा गया वह सुगमता से मिला। उन्हें सिर्फ इतना करना था कि स्कूली सत्र के अन्त में एक नये किस्म का टेस्ट छात्रों को देना था जिससे यह पता चलता कि अगले साल अकस्मात् प्रगति करने की क्षमता किन-किन विद्यार्थियों में थी।

असल में यह पूरा ढोंग रचा जा रहा था, टेस्ट केवल एक साधारण आई.क्यू. टेस्ट था जो मात्र बहाना था। अध्ययन के नाम पर जो छात्र चुने गये थे, वे संयोग से चुने हुए प्रत्येक कक्षा के 20 प्रतिशत छात्र थे। इनके नाम शिक्षकों को दिये गये यह कहकर, हाँ, अगर आपको हावर्ड के लिए किए गए इन टेस्ट परिणामों में रूचि है तो....

इस तरह से तांता बांधकर, यहाँ एक बीज, एक ख्याल शिक्षकों के दिमाग में सहज स्वाभाविक तरीके से बोकर, अनुसंधान दल को सिर्फ अब इन्तजार करने की जरूरत थी और यह देखने की कि क्या घटता है। एक टेस्ट स्कूली सत्र शुरू होने के चार माह बाद दिया गया, फिर एक सत्र समाप्त होने पर और आखिरी टेस्ट साल भर बाद।

परिणाम ऐसे निकले कि रोसेन्थाल टीम हतप्रभ होकर ताकती रह गई। लाटरी के तरीके से (रेन्डमली) चुने हुए छात्रों ने दूसरों की तुलना में तेजी से प्रगति की थी ये प्रगति करने वाले छात्र वे ही थे जिनके विषय में शिक्षकों से कहा गया था कि इनसे पढ़ाई के बेहतर परिणामों की उम्मीद की जा सकती है कई उदाहरणों में से दो पेश हैं:– जैसे, एक मैक्सिकी बच्चे का आई.क्यू. केवल 61 था, फिर जब उसका नाम लाटरी जैसे संयोग से रोसेन्थाल टीम द्वारा दिये गए नामों में शामिल हुआ तो वह शिक्षकों का चहेता बन गया और एक साल में उसका आई. क्यू 106 हो गया। एक पिछड़ा छात्र लाटरी पद्धति से चुने जाने पर साल भर में प्रतिभा-शाली हो गया। इसी तरह का आश्चर्यजनक परिवर्तन मारिया के साथ हुआ जिसका आई. क्यू 88 से 128 तक बढ़ा। जिसका नम्बर नहीं आया।

इस प्रयोग से कई मुद्दे उभरे। एक आयाम उन बच्चों का भी था जिनके नाम शिक्षकों को नहीं बताये गये। यह तो जाहिर है कि इन बच्चों के परिणाम विशिष्ट और अव्वल दर्जे के नहीं रहे पर एक गंभीर और विशेष बात यह थी कि इनमें से किसी को कोई उपलब्धि हासिल करने पर भी उसे कम अंक दिये गये, उसे उस स्तर पर उतारा गया जहाँ "उसे होना चाहिए था"। दूसरे शब्दों में जितनी

शेष पृष्ठ 14 पर

बच्चे कैसे सीखते हैं ?

अक्सर हम बच्चों को सिखाने के चक्कर में जल्दबाजी से काम लेते हैं। उनसे जो कुछ नहीं बनता फटाफट बताकर हम समझते हैं हमने उसे सिखा दिया। कहीं ऐसा तो नहीं कि हमने उसे खुद सीखने के मौके से रोक दिया है। प्रस्तुत है जॉन होल्ट की पुस्तक 'हाऊ चिल्ड्रन लर्न' का एक अंश।

पांच साल की बच्ची नोरा से मुझे बच्चों के पढ़ना सीखने के बारे में बहुत-सी बातें सीखने को मिलीं कि बच्चे जब अपने आपको पढ़ना सिखाते हैं तो क्या करते हैं, किस तरह की मुश्किलों पर अटकते हैं और उन्हें कैसे सुलझाने की कोशिश करते हैं।

एक रविवार को मैं नोरा के परिवार से मिलने गया। वे लोग मेरे पुराने दोस्त थे। दोपहर के समय जब मैं यूं ही खाली बैठा था तो नोरा हाथ में एक किताब लिए मेरे पास आई और कहा "किताब पढ़ाओ"। मैंने कहा चलो, तो वो झट बगल में बैठ गई।

किताब मजेदार थी–छोटे बच्चों के लिए तो बहुत ही अच्छी। हँसाने वाली, गुद-गुदाने वाली तस्वीरें थीं और रोजमर्रा के सरल शब्द थे–हॉप ऑन पॉप (Hop on Pop) नए शब्द भी ऐसे जिनका अंदाज़ा बच्चे तस्वीरों को देखकर और पिछले शब्द पढ़ कर लगा ही सकते थे। तो ख़ासकर ऐसे बच्चों के लिए जो अपने आपको पढ़ना सिखा रहे हैं, यह किताब काफी अच्छी थी।

पहले तो मुझे समझ में नहीं आया कि मैं उसे किताब कैसे पढ़ाऊं ? जब उसने पढ़ना शुरू किया, मैं चुपचाप बैठा रहा–कितना मुश्किल है चुपचाप बैठना, ख़ासकर एक अच्छे शिक्षक के लिए जैसा कि मैं अपने आपको मानता था। मैं तो झट छात्रों को समझाना और मदद करना शुरू कर देता हूं।

ख़ैर, शुरू के कुछ पन्ने तो आसान थे, वो पढ़ गई। फिर ऐसे शब्द आने लगे जिन पर वह अटकने लगी। मैं उसे शब्द के साथ जूझते देखता रहता–जब लगता कि वो बुरी तरह अटकी है, तब जाकर कहीं कुछ मदद करने के लिए मुंह खोलता। तो भी अक्सर मैं उसे शब्द पढ़ कर बताता नहीं था। मैं कई इशारों से उसे शब्द भांपने में मदद करता। जैसे, अगर उसने पिछले पन्नों में वह शब्द पढ़ा था तो उसकी ओर ध्यान खींचता कि देखो तुमने यहां पढ़ा है यह शब्द। या अगर वो शब्द किसी दूसरे शब्द से मिलता-जुलता होता तो उसकी तरफ इशारा करता। अगर तस्वीरों से या कहानी की घटनाओं से शब्द को भांपा जा सकता था तो मैं उस ओर इशारा करता। अगर वह फिर भी शब्द को नहीं भांप पाती तो मैं कई बार उससे कहता कि चलो छोड़ो आगे पढ़ो, फिर कहीं यह शब्द दिखेगा तब देखना शायद समझ में आ जाए। पर अगर वह फिर भी बताने को कहती तो मैं उसे बता देता कि शब्द क्या है।

पढ़ते हुए बहुत देर नहीं हुई थी कि एक अजीब चीज होने लगी। नोरा पहले जिस शब्द को सही पढ़ गई थी उसे गलत पढ़ डाला। ऐसा कई बार हुआ। मैं कुछ हैरान हुआ और कुछ खीझने लगा–जैसा कई बार कक्षा में

होता है, जब मेरे छात्र कुछ एक बार सीखने के बाद भूल जाते हैं। मैंने सोचा "क्या सचमुच नोरा ये शब्द इतनी जल्दी भूल गई है ?" या वो लापरवाही कर रही है, ध्यान नहीं लगा रही, कोशिश नहीं कर रही ?" पर ऐसा तो था नहीं। जाहिर था कि वह बहुत मन से, बहुत लगन से किताब पढ़े जा रही थी। फिर ऐसा कैसे हो सकता है कि पिछले पन्ने पर वह एक शब्द सही पढ़ रही थी और अब अगले पन्ने में गलत पढ़ने लगी ? बिल्कुल बेवकूफी सी लगी। पर नोरा बहुत होशियार; बहुत तेज बच्ची थी– और वो टालम टोल करती भी नहीं जान पड़ती थी।

तब मुझे सूझा कि मैं तो इस किताब को, इनमें लिखे शब्दों को अपनी निगाह से देख रहा हूं। नोरा की निगाह से देखने पर ये शब्द कैसे लगते होंगे ? पर मैं नोरा की निगाह से देख भी कैसे सकता हू ? जो चीज हमें आती हो उसे यह सोच कर देखना, कि मानो यह हमें आती नहीं है, कितना मुश्किल है।

फिर मुझे अचानक एक पुरानी बात याद आ गई। एक बार मैं किसी भारतीय भाषा में लिखी एक किताब को देख रहा था। मैं कोशिश कर रहा था कि पहचानूं कि कौन से शब्द एक पन्ने में सबसे ज्यादा बार आते हैं। सच तो यह है, कि ऐसा करना मुझे लगभग असम्भव लगा। सबसे पहले तो वो पूरा पन्ना ही ऊटपटांग आकारों से भरा जान पड़ा। और यद्यपि मैंने सिर्फ एक छोटे से शब्द को अपना ध्येय बना लिया, और उसे ही ढूंढने लगा तो भी–देखते ही उस शब्द को पहचान लेना और बाकी शब्दों से अलग कर पाना काफी टेढ़ी खीर साबित हुई। ऐसा करने में मुझे समय भी खासा लगा। कई बार तो मैं उस शब्द को

नजरन्दाज करता हुआ सीधे आगे बढ़ जाता था।

इसी तरह बच्चों को भी काफी समय लगता है और धीरे-धीरे ही वे शब्दों व अक्षरों की शक्ल सूरत से वाकिफ हो पाते हैं। शब्दों, अक्षरों के आम हुलिए से इस हद तक अभ्यस्त होना कि एक शब्द को दूसरे से झट अलग पहचाना जा सके–इतना अभ्यस्त होने में काफी समय लगता है। और तब जाकर सहज, अनायास रूप से हम झट अक्षरों व शब्दों को पहचानने लगते हैं।

तब मुझे लगा कि बच्चे की धीमी गति से, उसकी गलतियों से, उसके भुलक्कड़पन से हमें परेशान नहीं होना चाहिए। हम चूंकि अब सीख चुके हैं इसलिए हमारे लिए यह याद कर पाना ही बहुत मुश्किल है कि हमने पढ़ना कैसे सीखा था–और जब हमें पढ़ना नहीं आता था तो ये अक्षर हमें कैसे लगते थे।

अनपढ़ घरों के बच्चों को स्कूल जाकर पढ़ना-लिखना सीखने में जो परेशानी होती है, वह शायद इस वजह से भी होती होगी। घर में अगर किताबें वगैरह हों तो छुटपन से ही उन्हें उलट-पलट कर देखने से बच्चे अक्षरों शब्दों की शक्ल-सूरत से परिचित हो जाते हैं उनकी आकृति से अभ्यस्त होने लगते हैं–अनायास ही। जबकि अनपढ़ घर के बच्चों को यह मौका नहीं मिलता। इसीलिए शुरू में उन्हें ज्यादा समय चाहिए, सिर्फ शब्दों-अक्षरों को देखने, टटोलने के लिए–पढ़ना शुरू करने की कोशिश से पहले।

कुछ समय पहले एक शिक्षिका मुझे अपने काम के बारे में बता रही थीं। वो मानसिक रूप से अविकसित बच्चों के साथ काम करती

हैं। बात करते-करते उन्होंने कहा "मेरी कक्षा में बहुत-सी मजेदार किताबें रखी रहती हैं–पर बच्चे उन्हें पढ़ते नहीं हैं–सिर्फ पन्ने पलटाते रहते हैं। मैं क्या करूं कि वो पढ़ने में रुचि लें?" तब तो मैंने उन्हें अपनी ओर से एक दो सुझाव दे दिए थे। पर नोरा के साथ एक दोपहर बिताने के बाद मुझे लगा कि जिन बच्चों ने किताबें ही बमुश्किल देखी होंगी, उनके लिए शुरू-शुरू में यूं ही किताबों को उल्टाना-पुल्टाना, चित्र देखना, पढ़ना शुरू करने का पहला, और जरूरी कदम है।

वैसे इस बात का एक और कारण हो सकता है–यानि इस बात का कि पृष्ठ 5 पर पढ़ा शब्द पृष्ठ 6 पर बच्चे से गलत क्यों हो जाता है। दरअसल जो चीजें हम भलीभांति जानते हैं, उन्हें जानने के हम इतने आदी हो चुके होते हैं कि हम भूल जाते हैं कि कुछ नया सीखना या याद रखना कैसा होता है। किसी नए मित्र का पता हो–या फोन नम्बर–शुरू-शुरू में उसे लेकर ही हम कितना अनिश्चय महसूस करते हैं–"पता नहीं 61028 था या 38–ऐसा ही कुछ था–पक्का नहीं है।" कहते हैं न ऐसा? हमें लगता है कि 28 ही है–हम फोन मिलाते हैं–मिल जाता है तो पक्का हो जाता है कि 28 ही था–38 नहीं। कई दिनों अगर फिर उस नम्बर का इस्तेमाल करने का मौका न आया हो, तो मौका आने पर अनिश्चय-सा लगता है–28 ही था न? या मैंने 38 घुमाया था? फिर फोन मिलाते हैं–सही मिलता है तो फिर पक्का हो जाता है कि 28 ही था।

इसी तरह जब बच्चा पृष्ठ 5 पर "बकरी पढ़ता है–और पृष्ठ 6 पर अटकने लगता है–अनिश्चय से, कि यह बकरी है कि नहीं, तो यह स्वाभाविक ही है। उसे अभी तक पक्का थोड़े न मालूम हुआ है कि ऐसे लिखा हुआ शब्द "बकरी" होता है। वो अन्दाज लगाता है–आभास बनाता है–बोल के देखता है–"बकरी"–सही निकलता है तो उसका आभास पक्का होता है। पर अगले पृष्ठ पर फिर वो झिझकता है–"बकरी ही है न? कुछ और तो नहीं?"–हो सकता है इस बार उसे बकरी शब्द का ध्यान ही न आए और वह अन्दाज लगाता रहे कि यह शब्द क्या हो सकता है। पर जब कई बार कोशिश और परीक्षण के बाद, उसके आभास सही निकलते जाते हैं तब जाकर कहीं यह एक पक्की, सहज जानकारी बन जाती है कि "ऐसा दिखने वाला शब्द बकरी होता है।" परन्तु इस सहज पक्की जानकारी को बनने में समय लगता है–कुछ बच्चों को औरों से ज्यादा समय भी लग सकता है।

जब बच्चे कुछ भूल जाते हैं, तो हमेशा यह बात नहीं होती कि उनकी स्मृति कमजोर है। दरअसल वह अपनी स्मृति पर विश्वास नहीं कर पाते। उन्हें इस बात का डर लगा रहता है कि कहीं वे गलत तो नहीं? तो मालूम होते हुए भी भरोसे के साथ कुछ कहना उसके बस के बाहर की बात हो जाती है। मैंने कई बार देखा है कि किसी भी शब्द को लिखते हुए, बच्चों का पहला अन्दाज सही रहता है, पर उन्हें अपने अन्दाज पर भरोसा नहीं रहता। उन्हें लगता है "यह गलत होगा" और वो किसी और तरह से उसे लिखने की कोशिश करने लगते हैं–नतीजा यह निकलता है कि वह वास्तव में गलत लिख डालते हैं–इस तरह वे अपने आत्मविश्वास को और भी कमजोर बना डालते हैं।

यह समझते हुए मैं नोरा की बगल में दोपहर भर चुपचाप बैठा रहा था–उसकी गलती को सुधारने को होता, पर फिर अपने आपको रोक लेता। यहां तक कि मैंने उसका ध्यान उसकी गलतियों की ओर खींचा तक नहीं।

मैं समझ रहा था कि अगर मैं वैसा करता हूं, तो नोरा कुछ सहम जाएगी–अपने आभासों व अन्दाजों को बोलकर देखने में, झिझकने लगेगी और हर बार मेरी तरफ देखने लगेगी कि मैं शब्द पढ़वा दूं। वास्तव में वह मेरी मदद, मेरी सराहना के बगैर एक भी शब्द नहीं पढ़ेगी। इसलिए मैं चुप बैठा रहा। वो तो बच्ची ठहरी, हम जैसे वयस्क भी यह पसन्द नहीं करते कि कोई हमारी गलती बताए और सुधारे।

हममें सैम जॉनसन का अडिग आत्मविश्वास कहाँ जिसने कुछ गलत लिख डालने पर पूछे जाने कि आपने ऐसा गलत कैसे लिख डाला–पलक झपकाए बगैर सपाट जवाब दिया था, "निरी अज्ञानता के कारण, जनाब।" बहुत कम लोग और बच्चे तो और भी कम अपनी गलतियों के सुधारे जाने को इस अविचल भाव से ले सकते हैं। हममें से अधिकतर लोगों के लिए ऐसी बातें हमारे नाजुक आत्मसम्मान के लिए असहनीय आघात साबित होती हैं।

पर कुछ ही देर में मुझे लगा कि नोरा की गलतियां नहीं सुधारने का एक और अधिक महत्वपूर्ण कारण था। चूंकि मैंने उसे अकेला छोड़ दिया था, और सही-सही पढ़ो का आतंक पैदा नहीं किया था, सो नोरा अपनी धुन में बेफिक्री से पढ़े जा रही थी, और अनायास ही अपनी गलतियों को महसूस कर, उन्हें सुधारने लगी थी। उसने यह कैसे किया, यह देखने में बहुत मजा आया।

जब वह कोई गलती करती तो शुरू में तो उसे मालूम ही न पड़ता कि कुछ गड़बड़ है। पर जैसे-जैसे वह आगे पढ़ती गई मैंने देखा कि वह कुछ बेचैन सी हो रही है–जैसे उसे लगने लगा हो कि कहीं तो उसने कुछ ऐसा पढ़ डाला है जो गलत है, जो बाकी की कहानी से मेल नहीं खा रहा। जैसे मानलो उसने एक पन्ने पर "बकरी" गलत पढ़ डाला हो–पढ़ा हो "बाल्टी"। तो पहले तो वो इससे सन्तुष्ट हो आगे बढ़ गई। पर अगले पन्ने पर उसे ऐसा कुछ मिलता जो उसे गड़बड़ लगता। उसे शायद "बाल्टी" शब्द कहानी में ऐसी जगह मिले जहां उसका मतलब "बाल्टी" किसी भी तरह न निकलता हो। या उसे "बकरी" शब्द मिला हो और वो उसने इस बार सही पढ़ लिया हो। खैर जो भी हो, उसे आभास हो गया कि उसने पहले पन्ने पर कुछ गलत पढ़ डाला है। उसकी भौंहें थोड़ी सिकुड़तीं, कुछ देर वह रुक कर सोचती रहती, होंठ मोड़ती पर फिर इस अटपटे अहसास को टालने की कोशिश करते हुए आगे पढ़ने लगती। पीछे लौटने का उसका मन नहीं था–वह किताब पढ़कर खतम करना चाहती थी। पर वह अटपटा अहसास उसका पीछा नहीं छोड़ता। आंख की किरकिरी की तरह उसे सालता रहता। फिर काफी देर की उनुन-कुनुन के बाद वह खीझकर पन्ने पलट डालती और भौंह चढ़ाकर ढूंढती कि माजरा क्या था? कहां गड़बड़ हुई। अधिकतर वह अपनी गलती ढूंढ और सुधार पाई।

ऐसा बहुत बार हुआ। हमेशा तो नहीं–और कई गलतियों का उसे आखिर तक पता नहीं चला। शायद आगे की कहानी में ऐसा कोई संदर्भ न आया हो जो उसे गलती का आभास दिलाता। या शायद वह किताब खतम करने की धुन में थी और उसी ने फिक्र नहीं की। पर अपनी अधिकतर गलतियां उसने खुद पकड़ लीं। लगभग सभी बच्चों की तरह नोरा में भी चीजों में तालमेल बिठाने की प्रवृत्ति, कोई बात "सही" न लगे तो उसे "सही" करने की प्रवृत्ति थी। और जब ताल-मेल न बैठे तो उसमें, गलती पकड़कर उसे सुधारने की योग्यता भी थी।

पर बात इतनी सी है, कि इस सब में समय लगता है–गलती का आभास होना, उसे ढूंढ निकालना, उसे ठीक करना–इस सब में समय लगता है। पर, बच्चे अपने आप ही, बिना टोके हुए, यह सब कर डालते हैं यह निश्चित है। जबकि घबराहट और दबाव की हालत में बच्चों की यह सहज प्रवृत्ति, यह सहज क्षमता बिल्कुल काम ही नहीं कर पाती, स्कूलों में हम इस बात के लिए कभी समय ही नहीं देते। गौर कीजिए कि जब कक्षा में बच्चा कोई गलती करता है, मानलो, किताब से पढ़ते वक्त, तो कैसे उसे तुरन्त आभास दिला दिया जाता है कि उसने गलती की है–बाकी बच्चे खिल-खिल करने लगते हैं, या अपना मुँह हाथ से ढाँप कर हँसी छुपाने की कोशिश करते हैं, या हाथ हिला कर शिक्षक को बताने की कोशिश करते हैं कि उन्हें सही-सही मालूम है–और शिक्षक खुद गलती सुधारने को तत्पर रहता है या पूछता है–"क्या पढ़ा तुमने? जरा ध्यान से पढ़ो?" या किसी दूसरे छात्र की तरफ मुंह करके उससे पूछता है "तुम बताओ" या अगर बहुत ही सहृदय और सहानुभूति भरा शिक्षक होगा तो बहुत प्यार और निराशा से मुस्कुरा डालेगा–जिससे गलती करने वाले बच्चे को साफ-साफ यह चुभता हुआ अहसास हो जाएगा कि उसने अपने शिक्षक को निराश किया है। वो शिक्षक जिसकी सराहना पर उसका पूरा छोटा-सा संसार टिका है–उसे निराश करता है। जो भी हो–किसी न किसी इशारे से उसे मालूम चल जाएगा कि उसने गलती की है। यही नहीं, सबको पता भी है कि उसने गलती की है। इस तरह सरेआम शर्म का पात्र होने के बावजूद भी अगर वह किसी तरह अपने आत्म-विश्वास को डूबने से बचाए रहा, तो भी उसे इतना समय कभी नहीं दिया जाएगा कि वह अपनी गलती खुद ढूंढकर सुधार ले। शिक्षकों को सही उत्तर सिर्फ अच्छे ही नहीं लगते, उन्हें तुरन्त मिले उत्तर अच्छे लगते हैं। अगर बच्चे ने तुरन्त सही उत्तर न दिया, तो कोई और दे देगा।

इस सबसे भयंकर नुकसान होता है। बच्चों में खुद अपनी गलती पहचानने और उसे ठीक करने की प्रवृत्ति सूख कर रह जाती है। अपने आप सोच-समझ कर कुछ करने का, अपना दिमाग लड़ाने का साहस व आत्म-

शेष पृष्ठ 23 पर

शिक्षा क्यों : एक शिक्षक के विचार

—श्रीमती जी. दुबे

बहुत साल हुए जबलपुर में जयप्रकाश नारायण का एक भाषण सुना था जो शिक्षकों के लिए सम्बोधित था। एक घंटे के भाषण में एक बात दिमाग में चिपक गई—'शिक्षक हम्माल या कुली नहीं है जो शिक्षा का बोझ लादकर कक्षा तक ले जाए और वहाँ पटक दे।' फिर शिक्षक कौन है? उसका काम क्या है? और शिक्षा ही क्या है?

उस दिन से आज तक ये प्रश्न मेरे मन को कुरेद रहे हैं। क्या बहुत सी जानकारी ही छात्रों पर पटक देना हमारा काम है? कौन सी जानकारी? पृथ्वी से सूर्य की दूरी कितने किलोमीटर है, यह रटवाना क्या आवश्यक है? बाबर ने युद्ध में कितने सैनिक लगाए, इससे आज हमें क्या लेना देना, क्या यह सब पढ़ाना आवश्यक है? जब मेरे खुद के लड़के बड़े होने लगे तब कई प्रश्नों के उत्तर मुझे मिलने लगे। मैंने देखा कि कुछ विषयों में उनकी जिज्ञासा बढ़ रही थी; जानकारी को समझकर उसका मूल्यांकन करने की क्षमता विकसित हो रही थी और कुछ विषयों में केवल अंक प्राप्त करने के लिए वे पाठ याद कर लेते थे। चूँकि मैं स्वयं अंग्रेजी पढ़ाती हूँ तो इस विषय पर मेरा ध्यान अधिक गया। मेरे लड़के इस विषय से चिढ़ते थे हालाकि अंक उन्हें अच्छे मिलते थे। मास्टर साहब अंग्रेजी व्याकरण के जटिल नियमों को समझा देते और फिर उदाहरण और अभ्यास दे देते और जब इन नियमों का उपयोग पाठों में होता तब इसकी ओर छात्रों का ध्यान आकर्षित नहीं किया जाता। फलस्वरूप उन्हें नियम तो याद हो गये और कुछ हद तक उसका उपयोग भी वे करने लगे, लेकिन नियमों का पाठ पढ़ते समय क्या उपयोग हो सकता है यह उनको अहसास न हो सका। उदाहरण के तौर पर लीजिए Punctuation में i का उपयोग जो कि तीन तरह से अंग्रेजी में किया जाता है। इनमें एक तरीका है कि i के पहले के वाक्यांश को अथवा उसके किसी शब्द को i के बाद वाले वाक्यांश में समझाना। पाठ में वाक्य था "He limped; some years ago he had broken his leg in an accident." प्रश्न था—"Why does he limp? उत्तर स्पष्ट शब्दों में कहीं पाठ में नहीं था किन्तु Semicolon के उपयोग को समझने से उत्तर स्पष्ट हो जाता कि उसकी टांग टूट गई इसलिये वह लंगड़ाता है। इस तरह के अनेक उदाहरणों से मेरी समझ में एक बात आ गई कि शिक्षा में जानकारी का स्थान समझ को बढ़ाने के लिए है। जानकारी अपने आप में एक लक्ष्य नहीं है।

तब दो और प्रश्न उठे। उम्र के हिसाब से जानकारी कितनी दी जानी चाहिए और शिक्षा का ध्येय क्या है। कॉलेज के छात्रों को वक्तव्य देकर अपने कर्त्तव्य की पूर्ति समझ लेती थी मैं। लेकिन जब छोटे बच्चों को पढ़ाने लगी, उनके भोले आइने जैसे चेहरों पर विभिन्न भावों को देखकर मुझे कई नई चीजें समझ में आने लगीं। एक तो यह कि जानकारी बच्चों को उतनी ही देनी चाहिए जितनी वे अपनी समझ के विकास में इस्तेमाल कर सकें। गणित में 7-8 वर्ष के बालक को जब धन-ऋण-गुणा और भाग का रिश्ता समझाया जाता है तो लाखों में अंक वाले गणित व्यर्थ हैं। उसे तो सौ या दो सौ की तो कल्पना है लेकिन लाख और करोड़ उसके मस्तिष्क में केवल अंक मात्र हैं। यह नहीं कि वह सवाल नहीं कर पाएगा—वह तो कर लेगा पर जो सिद्धांत उसे सिखाने चले थे वे पीछे रह जाएँगे और उसकी समझ में सही प्रकार से बैठ नहीं पाएँगे। जानकारी उतनी हो जो उसकी कल्पना ग्रहण करके अपना सकें।

और कल्पना का शिक्षा में क्या स्थान है? किसी ने कहा है कि कल्पना कल की आधारशिला है। जो कल्पना नहीं कर सकता; वह भविष्य को साकार नहीं कर सकता वह तो भूतकाल की पुनरावृत्ति ही करेगा। वाष्प-इंजन, बिजली का बल्ब, अंतरिक्ष में उड़ान, शल्य चिकित्सा ये सब पहले कल्पना ही में ही बने थे। इतने बड़े पैमाने पर न सही, साधारण पैमाने पर भी कल्पना समझदार सार्थक जीवन के लिए आवश्यक है, कल्पना से ही हम दूसरे की पीड़ा जान सकते हैं और आने वाले कल में क्या स्थिति होगी? और उससे कैसे जूझेंगे? यह भी कल्पना के सहारे जाना जा सकता है। व्यापारी वर्तमान की जानकारी के आधार पर कल की आवश्यकता की कल्पना करता है, गृहणी गर्मी में ही वर्षा ऋतु की समस्याओं की कल्पना कर लेती हैं और और उनके निदान के विषय में सोच लेती हैं। तब कल्पना का विकास अवश्य शिक्षा का एक अभिन्न अंग होना चाहिए, लेकिन कैसे? कक्षा 3 में दी गई जानकारी पर विभिन्न पहलुओं पर सोचने के लिए यदि बालक को मौका दिया जावे तो उसकी कल्पना शक्ति बढ़ेगी।

उदाहरण के लिए इतिहास के पाठ्यक्रम में मुगलकाल पढ़ाते हुए बालकों को इस काल की अनेक दृष्टिकोणों से जांच करने के लिए कहा जाए, जैसे कुछ बच्चे उपलब्ध जानकारी के अनुसार लिखें कि उस काल में दिल्ली में रहने वाले बालक की क्या दिनचर्या थी, कुछ स्त्रियों की स्थिति पर, कुछ सैनिक के जीवन पर लिखें, इसके लिए उन्हें उस काल की कल्पना करनी होगी और उस काल का पूरा अहसास भी हो जाएगा, लेकिन यह तभी संभव है जब परीक्षा में भी ऐसे कल्पना प्रधान सूझबूझ वाले प्रश्न दिए जावें न कि ढर्रे पर बने रटन्त विद्या पर आधारित प्रश्न। लंदन विश्वविद्यालय की एक कक्षा की परीक्षा में पूछा गया था कि वाटरलू के युद्ध में यदि उस दिन वर्षा न होती तो युद्ध का नतीजा क्या होता? कारण सहित समझाइए। इस प्रश्न के उत्तर के लिए आपकी कल्पना में वाटरलू के उस युद्ध की तस्वीर का होना आवश्यक है तभी आप वे भारी भरकम तोप देख सकेंगे जो नेपोलियन लाया था। काली मिट्टी और रात भर की वर्षा ने इन तोपों को दलदल में व्यर्थ कर दिया था। वर्षा न होती तो इतिहास बदल जाता। जहाँ कल्पना शक्ति का विकास व्यक्ति के लिए आवश्यक है, वहाँ जिज्ञासा कल्पना की साथी है।

जिज्ञासा बुद्धि के विकास में उसी तरह सहायक है जैसे भूख शरीर के विकास में। मैंने देखा है कि कुछ शिक्षक जानकारी की बाढ़ छात्रों पर छोड़ देते हैं और वे उस बाढ़ में आधारहीन तिनकों की तरह बह जाते हैं। दूसरी ओर वे शिक्षक हैं जो कुरेद-कुरेद कर छात्रों की जिज्ञासा बढ़ाते हैं, उनमें जानकारी पाने की इच्छा पैदा करते हैं। इन शिक्षकों के छात्र एकदम भूखे शेर की तरह जानकारी हासिल करने में जुट जाते हैं, तब उनकी कल्पना शक्ति और समझ भी बढ़ती है।

जिज्ञासा, कल्पनाशक्ति, समझ अथवा अहसास इन तीनों के मिलने से मूल्यांकन की अमूल्य क्षमता प्राप्त होती है। शिक्षक का सबसे महत्वपूर्ण काम है छात्रों में मूल्यांकन करने का विवेक लाना। तभी छात्र अपने समाज, देश और संसार की स्थितियों का मूल्यांकन करेंगे, उनमें आवश्यकतानुसार रद्दोबदल करेंगे। इसी विवेक की प्राप्ति संभवतः शिक्षा का ध्येय है।

अनुभव ने मुझे यह सिखाया है कि किताब शिक्षक के हाथ वह जादू की छड़ी है जिससे वह उस किताब को खजाना बना सकता था। साधारण से हटकर, मस्तिष्क को गुदगुदाने वाले प्रश्न पूछकर, बहस करके, पाठ से संबंधित अनेक खिड़कियाँ खोलकर वह छात्र को पाठ की सीमा से बाहर ले जा सकता है। उसकी जिज्ञासा को ढील दे सकता है और कल्पना के पंख को मजबूत कर सकता है।

क्या तुम बता सकते हो कि—

(१) सूखा पड़ने की अधिक संभावना किन जगहों पर होगी?

(२) सिंचाई के साधनों की सबसे अधिक जरूरत कहाँ होनी चाहिए।

भूगोल की पुस्तक के कुछ प्रश्न इस प्रकार थे—एक अज्ञात स्थान के विषय में निम्न-लिखित जानकारी है जिसे पढ़कर आप बताएँ कि वह संभवतः कौन सा शहर हो सकता है और यह भी बताएँ कि आप इस नतीजे पर कैसे पहुँचे? स्थिति 50° उत्तरी अक्षांश से ऊपर नदी के मुहाने पर बसा हुआ, ठंड में बहुत ठंडा, गर्मी में साधारण ठंडा, वर्ष भर वर्षा, व्यापार मुख्य रूप से आयात-निर्यात का, जिसमें कच्चा माल आयात होता है और औद्योगिक वस्तुओं का निर्यात। इस प्रश्न के कई संभव उत्तर होते हैं जिसमें लंदन एक है और शिक्षक उत्तर में दी गई तर्कशक्ति के आधार पर अंक देता है क्योंकि स्थिति की कल्पना करके ही छात्र युक्तिसंगत उत्तर दे सकेगा: ○

लघु कथा

पुरस्कार के हकदार

—यतीश कानूनगो

प्रशिक्षण की समाप्ति पर शैतान ने अपने चेलों की परीक्षा लेने की सोची। सभी चेलों को सभागृह में एकत्रित कर उस्ताद शैतान ने घोषणा की—"प्रिय चेलो! आज तुम्हारा प्रशिक्षण पूरा हुआ। तुम सभी अपनी कलाओं में इतने पारंगत हो चुके हो कि न तो पृथ्वी पर अमन चैन रहने दोगे और न ही किसी को विकास मार्ग पर आगे बढ़ने दोगे, ऐसा मुझे पूरा विश्वास है। किन्तु फिर भी हर प्रशिक्षण की एक अनिवार्यता है—परीक्षा। जिससे श्रेष्ठतम का चुनाव किया जा सके। आज का दिन तुम्हारी परीक्षा का दिन है, जाओ, और अपना-अपना करतब दिखाकर आओ। सर्वश्रेष्ठ काम करने वाले को पुरस्कार दिया जावेगा।

चेले अपने करतब दिखाने चल पड़े। एक ने खड़ी फसल पूरी नष्ट कर दी। एक ने पूरे गाँव को आग की भेंट कर दिया। कोई दिन भर में दो चार पुल ही गिरा पाया तो कोई सौ-पचास झगड़े कराने में सफल रहा। प्रत्येक ने अपनी बुद्धि और क्षमता के अनुसार कौशल दिखाया। केवल एक ने स्कूल जाते हुए बच्चों को प्रलोभन देकर मार्ग में ही रोक लिया। उसने सारे दिन उन बच्चों को इस प्रकार समझाया, बातचीत की और खेल खिलाये कि स्कूल से बच्चों को अरुचि हो गई।

सब लौट कर अपनी-अपनी दास्तान शैतान को सुनाने लगे। सबको सुनने के पश्चात् उस्ताद ने पुरस्कार की घोषणा उस चेले के नाम की जिसने बच्चों को स्कूल नहीं पहुँचने दिया।

अपने दीक्षान्तभाषण में शैतान ने कहा—'नष्ट की गई फसल फिर से उगाई जा सकती है, आग में जली बस्ती फिर से बसाई जा सकती है, टूटे पुलों को फिर से बनाया जा सकता है तथा झगड़ने वालों में पुनः सुलह हो सकती है. मगर जो जीवन से एक बार नष्ट हो गया उसे फिर से नहीं बनाया जा सकता। इसलिये यह कार्य सर्वश्रेष्ठ होने से इसी चेले को श्रेष्ठतम घोषित करते हुए पुरस्कार दे रहा हूँ।

पाठ्य पुस्तकों में भयंकर असंगतियाँ और गलत जानकारियाँ देने वाले लेखक और सम्पादक, वे अधिकारी जो समय पर पाठ्य-पुस्तकें उपलब्ध नहीं कराते और न ही शाला व्यवस्था सुधारते हैं, वे शिक्षक जो न तो पढ़ाते हैं और न पढ़ाने देते हैं, वे प्रशासक जो शाला के अरुचिपूर्ण स्वरूप को कायम रखने में साझीदार हैं क्या सभी पुरस्कार पाने के हकदार नहीं हैं?

—एकलव्य, देवास (म.प्र.)

कन्जर, शिक्षा और समाज

--जीवनसिंह ठाकुर

कंजर जाति को अपराधी जाति करार देकर उनके प्रति उपेक्षा और असम्मान का भाव समाज में व्याप्त है। उन्हें वंशानुगत अपराधी मानकर समाज की मुख्य धारा में मिलाने के प्रयास बहुत समय तक नहीं किये गये। पिछले कुछ वर्षों से इस समस्या की ओर ध्यान दिया जा रहा है। अपराधी जाति शिक्षा सुधार के प्रभारी श्री जीवनसिंह ठाकुर ने प्रस्तुत लेख में कंजर जाति की कुछ विशेषताएँ बताई है। वे मानते है कि इस वक्त कंजर मुख्य धारा में शामिल होना चाहते है। इधर का पूर्वाग्रह, उधर का अविश्वास टूटे तो बात बने।

मानव विकास को ध्यान में रखकर कालांतर में विकसित समाज का अक्सर अध्ययन करें तो एक स्पष्ट तस्वीर सामने आती है कि, आर्थिक मामलों में असमान वितरण की कुव्यवस्था ने शोषण-शोषित की स्थिति निर्मित की है। समाज के विकास के साथ ही पूंजी का विकास भी हुआ। वह भिन्न रूपों में हमारे सामने आयी है। मसलन जाति, वर्ग, संप्रदाय, प्रभाव, प्रतिष्ठा, सत्ता। इसीके साथ सभ्यता, असभ्यता, अपराध, कानून का निर्माण भी हुआ। लेकिन बड़ी चालाकी से अपराध कर्म को वंशानुगत तरीके से पेश किया जाता है ताकि इसे पैतृक और "वंश" के गुणों की तरह सिद्ध करके इसके पीछे के तमाम आर्थिक, सामाजिक शोषणों पर पर्दा डाला जा सके। हालांकि कई पाश्चात्य विद्वानों ने अपराध कर्म को वंशानुगत सिद्ध करने की कोशिशें की हैं, लेकिन वैज्ञानिक अध्ययनों और विश्लेषणों ने यह प्रमाणित कर दिया है कि अपराध गुण, आदि माहौल पर ही ज्यादा निर्भर करते हैं।

पश्चिमी देशों के विद्वानों ने उच्च जाति की श्रेष्ठता के लिये भी इसी "वंशानुगत" मामले का सहारा लेकर सदियों तक यह प्रचार किया था कि एशिया, अफ्रीका के लोग गोरी जातियों से बुद्धि, कौशल, प्रतिभा में प्राकृतिक रूप से ही पीछे हैं। गोरी जाति में हुकूमत करने की प्राकृतिक दक्षता है, इसीकी आड़ में उन्होंने दोनों महाद्वीपों का घनघोर शोषण किया है। लेकिन एशिया, अफ्रीका में चले सांस्कृतिक, आर्थिक, स्वतंत्रता संग्रामों ने प्रमाणित किया कि काली नस्ल के लोग सांस्कृतिक उच्चता प्राप्त करके गोरी नस्ल को भी पीछे छोड़ सकते हैं। इसी तरह अपराध का विश्लेषण करते समय समाज की सत्ता, आर्थिक व्यवस्था, वर्ग, जातीय वर्गीकरण को देखना चाहिये उसीके संदर्भ में भारत की अपराधी जाति का भी विश्लेषण किया जाना चाहिये।

अपराधों का अध्ययन कई भागों में किया गया है; जैसे (1) लघु अपराध (2) गंभीर अपराध (3) आर्थिक अपराध (4) मौन अपराध (5) राजनैतिक अपराध (6) विविध अपराध।

हेम के अनुसार अपराधों को तीन भागों में बांटा गया है--(१) व्यवस्था के विरुद्ध अपराध (२) संपत्ति के विरुद्ध अपराध (३) व्यक्तिगत अपराध।

सदरलैंड ने दो प्रकार के अपराधी बताये हैं-(१) निम्न वर्ग अपराधी (२) श्वेत वसन अपराधी।

इसके अलावा लोम्ब्रोजों ने चार प्रकार के अपराधी बताये हैं-(१) जन्मजात (२) अपस्मरी अपराधी (३) आकस्मिक अपराधी (४) काम अपराधी।

जहां तक कंजरों का प्रश्न है उनकी उत्पत्ति-कर्म के बारे में कई जगह मतभेद हैं। भारतीय संस्कृति कोश के खंड दो में बताया है कि कंजरों के पूर्वज उत्तर भारत के थे-तैमूरलंग के आक्रमण के समय ये लोग इरान, तुर्की, मिश्र, स्पेन, इंग्लैंड तक निकल गये जिसमें आज भी भाषायी समानता पायी जाती है। भारतीय कंजर का जहां तक प्रश्न है वह अपराधी जाति के रूप में परिवर्तित हो चुकी है। लेकिन उनका रहन-सहन, व्यवहार, चरित्र एक नयी रोशनी भी डालता है।

कंजर चरित्र की विशेषताएँ :

महर्षि वाल्मिकी का अपराध कर्म जग-जाहिर है, और उनका सुधर कर तात्कालिक मुख्य-धारा में शामिल होना कालान्तर में रामायण की रचना करना इतिहास, संस्कृति की थाती है। अपराध और अपराधी की शक्ल में सर्वाधिक नाम कंजर जाति तथा सांसी जाति का होता है। कंजर एक जीवट वाली जाति है। इसका अपराध-कर्म भी जग-जाहिर है। अपराध के इस ठीक गहरे अंधेरे के उस तरफ कंजर जाति के एक उज्ज्वल और कठोर नैतिक चरित्र का उजास है। इस उजास में एक ऐसी सभ्रान्तता मौजूद है, जिसमें किसी प्राचीन सभ्यता के खण्डहर हैं, जिसमें इसकी गरिमा, गरिमामय उद्गम और विकास की कहानी पता लगती है।

इस जाति में संकल्प और चरित्र की ऊँचाइयाँ हैं। इस अच्छाई की तारीफ आम नागरिक से लेकर पुलिस अधिकारी तक करते हैं। स्वयं एक पुलिस अधिकारी, जो कंजरों के सम्पर्क तथा थाना क्षेत्र के इन्चार्ज थे, ने बताया कि कंजरों का नैतिक स्तर उच्च है। कंजरों की पत्नियाँ अपने पति के लिए जान दे देती हैं। जीते जी उस पर आंच नहीं आने देती। यदि कोई कंजर भाई १० वर्ष भी घर से दूर रहे या सजा पाकर आये तब भी कंजर स्त्री उसके लिए प्रतिबद्ध रहेगी। यही बात पुरुष पर भी लागू होती है। आज कोई कंजर कर्जे इत्यादि की वसूली में तैश में स्त्री तक ले जाते हैं। लेकिन उसकी इज्जत सुरक्षित रहती है। किसी स्त्री के गहने इत्यादि छुड़ा भी लें, लेकिन उसकी देह से कभी छेड़छाड़ नहीं करते।

जहां तक चोरी, लूट का प्रश्न है, कंजर कभी भी शराब की दुकान, (कलाली) में चोरी नहीं करते। न ही किसी गुर्जर कलाल के यहां चोरी करते हैं। एक प्रकार से जातिगत कसम मानते आये हैं। कंजर आज भी अपने डेरे में चिराग नहीं जलाते। इस प्रथा के पीछे युद्ध-कालीन शिविरों के कुछ नियम भी हैं तथा कंजरों के छुपने का तरीका भी। कालान्तर में इसी नियम ने रूढ़ि का रूप ग्रहण कर लिया है, जो आज तक कायम है। जिस मृत्यु भोज को हम सभ्य समाज के लोग अब प्रगतिशीलता के कारण नकारने लगे हैं, कंजर इस नुक्ते में सदियों से शामिल नहीं होते। वे किसी मरे हुए व्यक्ति का खाना पसंद नहीं करते।

जहां तक धार्मिक विश्वास का प्रश्न है, कंजर पीपल देव की पूजा के साथ-साथ देवी-देवताओं को भी मानते हैं। वारदात करने से पूर्व शगुन-अपशगुन निकालते हैं। वारदात करने में ४ से १० दल होते हैं। यदि किसी वारदात में कोई साथी मर जाता है, तो भी उस साथी का हिस्सा उसके परिवार को मिलता है। यदि बच्चे छोटे हैं, तो लूट-चोरी के माल से हुई आमदनी का हिस्सा निरन्तर उनको मिलता रहता है। यह एक प्रकार से "अपराध-बीमा" होता है। कंजर समाज में सामाजिक सुरक्षा का आधार भी है, यानी कंजर जातीय रूप से एक दृढ़ जाती है। वारदात में पकड़ जाने पर कंजर कभी भी अपने साथी का नाम नहीं बताते। यदि बता दिया (जो कि बहुत ही कम होता है) तो उसका सामाजिक बहिष्कार कर दिया जाता है।

ऐसी बात नहीं है कि कंजर महज चोरी ही करते हैं। कंजर युवाओं में काफी खिलाड़ी भी हैं। इस जाति में बकायदा व्हालीवाल, कबड्डी की टीमें हैं। वे टूर्नामेंट आदि में खेलती भी हैं। यदि सरकार इनके कल्याण की ठोस योजना बना भी रही है, तो उसे इन युवाओं के खेल-प्रेम का भी ध्यान रखना होगा। जहां तक कंजरों के पैदल चलने, दौड़ने की कूबत की बात है, ये लोग एक दिन में २५-५० किलो मीटर का सफर कर लेते हैं। यदि उन्हें धावक, तेज चाल, मैराथन जैसी प्रतियोगिताओं के लिए तैयार किया जा सके, तो अन्तर्राष्ट्रीय खिलाड़ी तैयार हो सकते हैं।

हाल ही के वर्षों में मध्यप्रदेश पुलिस ने कई कल्याणकारी योजनाएं बनायी हैं। इस योजना के कई दूरगामी परिणाम मिलेंगे। लेकिन यह प्रयास एकांगी ही है। जरूरत है सभी विभागों की एक "कोआर्डिनेशन कमेटी" रचनात्मक परिणाम सामने लाये। लेकिन ऐसा अभी तक किया नहीं गया है।

कंजरों से लिए गये साक्षात्कार, अनौपचारिक चर्चाओं में यह तथ्य सामने आया है कि कंजर अपने युवा तथा बच्चों के लिए बेहद चिंतित हैं। वे चाहते हैं कि उनके बच्चे पढ़ें, सभ्य बनें, दूसरी जातियों की तरह अच्छी जगह समाज में पाएं। यह कहना गलत और अव्यवहारिक है कि कंजर सुधर या पढ़ नहीं सकते। सर्वप्रथम प्रश्न यह है कि सभ्य समाज की वह उर्जा शासन की नीतियां, योजनाएं, ऊर्जाहीनता की स्थिति में हैं। इस ऊर्जा को प्राप्त करना जरूरी है। हमें अपनी दृष्टि को सुधारना होगा, जो हमें किसी ठोस निर्णय पर पहुंचने नहीं देती। एक मुक्कमिल सामाजिक योजना, एक समयावधि का कार्यक्रम चाहिए। यह काम पुलिस, प्रशासन, शिक्षा, उद्योग, रोजगार विभाग मिलकर कर सकते हैं। साथ ही नागरिकों का समर्थन एक अनिवार्य शर्त होगी। इस वक्त कंजर एक विशेष मानसिकता में हैं। वे मुख्यधारा में सम्मिलित होना चाहते हैं। इधर का पूर्वाग्रह, उधर का अविश्वास टूटे तो बात बने।

–प्रभारी

अपराधी जाति, शिक्षा सुधार, देवास.

मेरे प्रिय शिक्षक

मुझे जिन सर ने मक्खी मारना सिखाया, उनको मैं नहीं भूल सकता। उन्होंने एक साल ही पढ़ाया था। बायलाजी पढ़ाते थे। वे हमें बहुत ही याद आते हैं। उनका तबादला हो गया। हमें बड़ा अफसोस हुआ। पर हमारे बस की बात कहां थी? हम सब मन मसोस कर रह गए।

एक तो वे कभी डांटते नहीं थे और डांटते भी तो मुस्कुराकर। हमें उनकी मार भी अच्छी लगती। हम तो चाहते थे कि वो हमें मारें, जिससे हमको लगे कि वो आशीर्वाद दे रहे हैं, पर ऐसा मौका कभी आया नहीं।

आठवीं पास करके बड़े स्कूल में आया तो महाराजवाड़ा स्कूल मुझे राजमहल जैसा लगा। मैं अपने को इस स्कूल का राजकुमार समझने लग गया। मेरा उठना-बैठना ही बदल गया। सलीके से रहने लगा और बराबर पढ़ने लगा। इसी बीच सर ने मक्खी मारना सिखा दिया। घर में मिले तो उसे पकड़ो, शीशी में भरो, अपने हाथ से डिसेक्शन के औजार बनाओ। घर की कई सुइयां और चिमटे बिगाड़ दिए, परंतु सब बना लिया।

मेरी मां ने पहले कभी मक्खी मारते नहीं देखा था। देखा तो वह बड़ी झल्लाई। वह कोई बायलाजी थोड़े पढ़ी है? मैंने कहा पढ़ने के लिए ही तो मार रहा हूं, मां। और उसके सामने ही मैं अपने औजारों से जिन्दा मक्खी के टुकड़े-टुकड़े कर देता तो वे बड़ी घिन करतीं और मुझे डांटतीं। किसने ये नए-नए ढोंग सिखाए हैं? मैंने अपने सर का नाम बता दिया। दो चार मर्तबा वे हमारे यहां आ चुके थे। पर वह उस दिन बहुत गुस्सा हुई और बोली, "आने दे तेरे सर को! तेरे सर पढ़ाते हैं कि मक्खी मारना सिखाते हैं? कैसा है तेरा स्कूल और कैसे हैं तेरे पढ़ाने वाले?"

हमें इन सर की वजह से पत्ती-पत्तों से प्यार हो गया था। उन्होंने हम से एलबम भी बनवाया था। उनके रेशे रेशे से पहचान हो गई थी। पत्ते-पत्ते हमें बताते थे और हम समझते थे।

एलबम में तरह-तरह के पत्ते लगाये। मक्खी मार कर हमने एक-एक चीज का अध्ययन किया। उनको लिख कर सर को बताते। हमसे देखने में कोई चीज रह जाती वे हमसे दूसरी मक्खी पकड़वाते और फिर बताते कि क्या चीज रह गई थी। बाद में तो हम और बारीकी से देखने लगे। हमने क्या-क्या नहीं बनाया? उनके कहने में आकर घर के कई पीपे, डब्बे तोड़ दिये, पर पानी छान कर बता दिया। टेलिविजन हमने बनाया, आक्सीजन तैयार करने से लेकर फिल्टर पम्प, आसवन उपकरण, पृथक्कारी कीप आदि बनाये। सभी ने सब तरह के उपरकण बनाये परन्तु ढंग सबके एक होते थे। हममें होड़ लग गई थी। हम अपना जेब खर्च उपकरणों को बनाने के लिये वस्तुओं को खरीदने में लगाने लगे कि हमारे सर तबादले पर चले गये। पढ़ते तो हम रोज ही हैं, पर तब से स्कूल में खालीपन लगता है।

सुधीरकुमार नागर कक्षा 11वीं
म.उ.मा.वि.१, उज्जैन

सामाजिक अध्ययन : एक प्रयास

यह तो जानी मानी बात है कि यदि बच्चे किसी क्रिया में शामिल होते हैं, किसी कार्य में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं, तो वे ज्यादा जल्दी और अच्छी तरह सीख पाते हैं। सीखने की प्रक्रिया में निष्क्रिय रहने से बच्चों की समझ विकसित नहीं होती, यह सब कहना कितना आसान है, उतना ही कठिन है ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करना जिनमें बच्चे सक्रिय रूप से सीख पाएँ मुश्किल भले ही हो, नामुमकिन नहीं है। इसी तरह का एक प्रयास उदाहरण के लिए यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। इतिहास या सामाजिक अध्ययन में इस तरह के प्रयोग में कई कठिनाइयां आती हैं। समाज का अनुभव जरूर छोटे से छोटे बच्चे को होता है। परन्तु समाज का विश्लेषण करना अपने से अलग तरह के समाज की कल्पना करना और उस समय या स्थान की सामाजिक प्रक्रियाओं को समझना बड़ों के लिए भी काफी जटिल होता है, तो बच्चों के लिए और भी।

नीचे दिया गया अध्याय इतिहास के एक युग (पाषाणकाल) की सामान्य जानकारी पर आधारित है। इसमें कोशिश की गई है कि बच्चे उस समय की विशेषताओं का आभास कर पाएँ और अपने समय से उनकी तुलना कर पायें। प्रयास किया गया है कि बच्चे दूसरे काल के बारे में कुछ गतिविधियों द्वारा सीखें, साथ ही एक ऐतिहासिक दृष्टिकोण विकसित करने का प्रयास भी किया गया है—यानी समाज को बदलता हुआ देखने; बदलाव के कारण ढूंढ़ने विसंगतियों को पहचान सके आदि। यह अध्याय १०-११ वर्ष के बच्चों को ध्यान में रखकर लिखा गया है। पाठकों से अनुरोध है कि इस पर हमें अपनी टिप्पणी भेजें। अपनी कक्षाओं में इसे पढ़कर उस पर प्रतिक्रिया भी हमें भेजें। यदि आपने सामाजिक अध्ययन (भूगोल, इतिहास, नागरिकशास्त्र) में कुछ ऐसे प्रयोग किए हों (किसी भी स्तर पर) जिसमें छात्र सक्रिय रूप से सीख सकते हैं, तो उन्हें आप जरूर भेजें। क्योंकि हम चाहते हैं कि सामाजिक अध्ययन की पढ़ाई को बेहतर बनाने में आपके साथ जुड़ सकें।

किताबों में लिखी बातें हमेशा दूसरों की होती हैं—किसी रामू , शामू या मीना, गीता की, मजेदार कहानियाँ दूसरे के बारे में होती हैं। राजा-रानी के किस्से ऐसे लगते हैं कि बहुत-बहुत पहले सब कुछ हो चुका है। ऐसा लगता है कि यह सब हमारे गाँव में इस समय तो नहीं हो सकता है।

तुम्हें कैसे लगेगा अगर तुम्हारे बारे में कोई किताब हो उसमें। तुम्हारा घर-परिवार, गाँव-मोहल्ले, खेत-कुएँ, दोस्त-पड़ोसी, यही सब हों?

तुम सोचोगे कि, 'मेरे बारे में भला कोई किताब क्यों लिखेगा? मेरे साथ तो, खास कुछ हुआ नहीं। मेरा गाँव भी कोई खास गाँव नहीं है।

पर शायद तुममें, तुम्हारे आस-पास, ढेरों बातें छिपी हैं, उनको खोजने की जरूरत है।

एक बार तुम्हारे ही जैसे तीन बच्चों ने, ऐसे खोजना शुरू किया। उन्होंने सोचा कि शायद तुम्हें अकेले ढूंढने में इतना मज़ा नहीं आए, तो साथ ढूंढेंगे।

एक का नाम है हांजी। वह किताब रटता रहता है, पर उसे कुछ समझ नहीं आता है। थोड़ा डरपोक है, जो बात सोचता है वो बताने में घबराता है, कहीं गलत न हो।

होशम यहां-वहां से पूछ कर, किताबें समझ लेता है। और ख़्याली? उसे पता नहीं कहाँ-कहाँ से ख़्याल सूझते रहते हैं।

तीनों ने सोचा कि वे तुम्हारे बारे में अपने बारे में किताब बनायेंगे। उसमें तुम्हारी उनकी बातें होंगी।

शुरू कैसे किया?

एक दिन हांजी हाँफते हुए आया, उसके हाथ में कागज़ का टुकड़ा था। उसने कहा 'मिल गया जी, मिल गया, मैंने ढूंढ लिया।'

'अरे, एक कागज़ के टुकड़े से क्या होगा, ऐसे कैसे अपनी किताब लिख पायेंगे।' होशम ने थोड़ा डाँट कर कहा।

'पर देखो तो सही, मुझे कैसी तस्वीर मिली,' हांजी ने कहा।

एक से दो, दो से तीन बिन्दुओं को मिलाते जाओ, और तुम भी देख लो हाँजी को क्या मिला?

'अरे, यह क्या?' होशम ने चौंक कर पूछा—'कैसे अजीब आदमी हैं; इनके घर कहाँ हैं? इनके कपड़े कहाँ हैं? इनके खेत कहाँ हैं?'

तीनों सोच में पड़ गए। हांजी ने फिर धीरे से कहा, 'शायद इनका गाँव जल गया है, सब कुछ जल गया है या फिर बाढ़ आ गई हो। पर इनके हाथ में क्या है? कुछ पत्थर की चीज़ हैं शायद। लगता है किसी दूसरे देश के हैं। कुछ समझ में नहीं आ रहा।' ख्याली ने कहा, परेशान होकर।

होशम ने समझाया, 'हो सकता है यह इनके पीछे बनी हुई गुफाएँ इनके घर हों।' 'हमारे गाँव में तो गुफाओं में नहीं रहते हैं', हांजी ने झट कहा।

'पर यह हमारे गाँव जैसे हैं ही कहां। गाँव में तो ढेर सारी चीजें हैं, जो यहाँ हैं ही नहीं, खेत, मकान, हल, और-और...

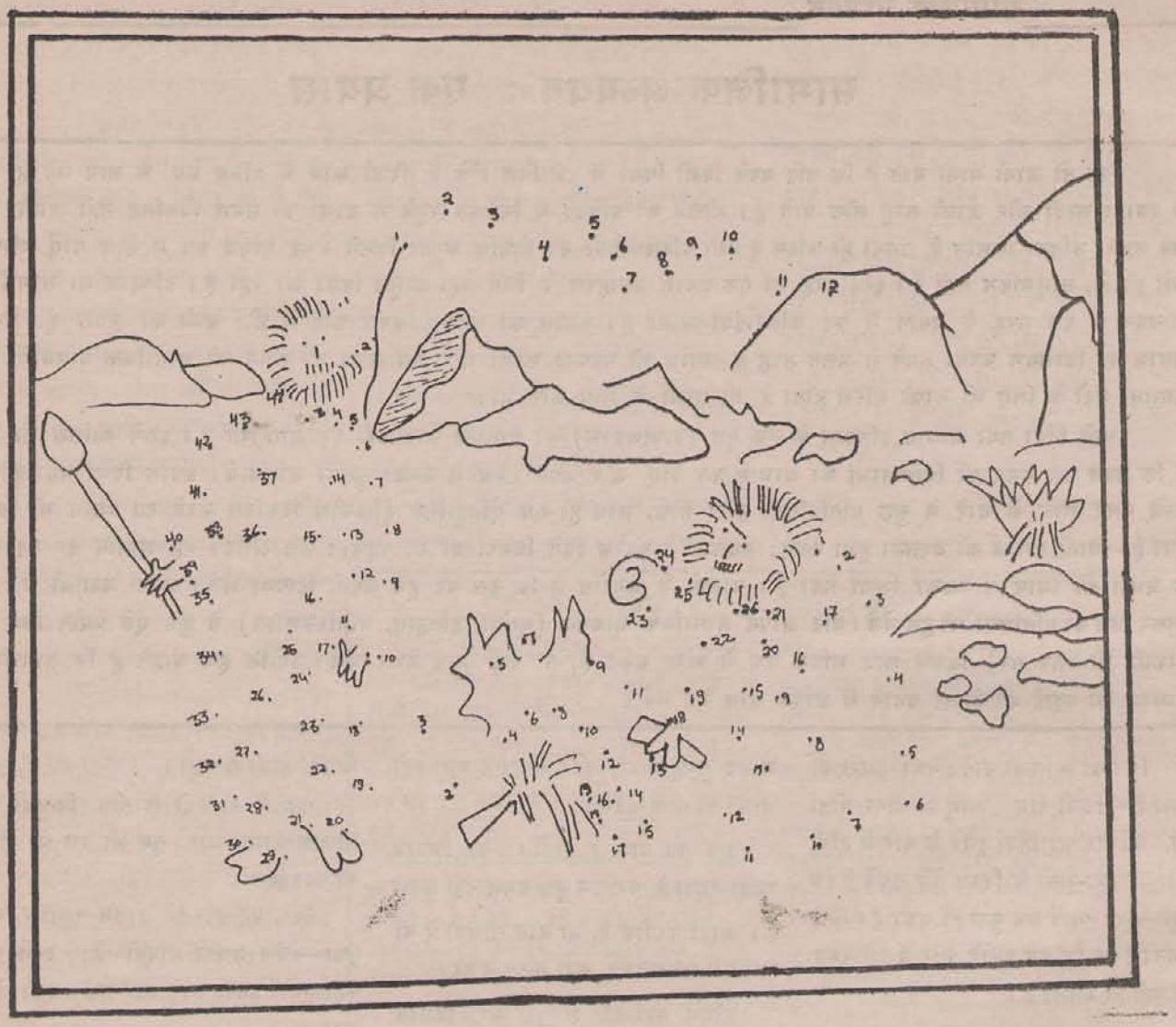

(बाकी कौनसी चीजें हैं गाँव में, जो तस्वीर में नहीं हैं? उन्हें तुम नीचे लिख दो और ख़्याली की मदद करो।)

हाँजी ने कहा, 'अरे, यह सब चीज़ हैं नहीं तो बना तो सकते हैं, ऐसे कैसे कोई रह सकता है।'

हो सकता है इन लोगों को मकान, हल, वगैरह बनाने नहीं आते हों, खेती करना नहीं जानते हों, ख़्याली बोली।

'कैसी अजीब बातें करती हो। मकान नहीं बना सकते, खेती नहीं कर सकते, यह तो सब को करना आता है।' हाँजी ने मज़ाक उड़ाते हुए कहा।

'नहीं जरा सोचो, शायद ख़्याली की बात इतनी बेकार नहीं हैं। आज ट्रेक्टर से खेती करते हैं, पहले तो लोगों को नहीं आता था।' होशम ने कहा।

'पहले इसलिए नहीं आता था, क्योंकि ट्रेक्टर थे नहीं, बने नहीं थे। नानी तो कहती रहती हैं ना, यह क्या राक्षस जैसे धक-धक करती नई चीज़ें हैं, आजकल!' ख़्याली ने मुस्कराते हुए कहा।

'नानी के जमाने में तो और भी चीज नहीं थीं जिन्हें आज हम इस्तेमाल करते हैं या कई चीज़ जो आज सभी के पास हैं, उस समय नई-नई बनी थीं, और कुछ ही घरों में थीं,' होशम बोला।

कौन सी चीज़ नहीं थीं नानी के जमाने में, जो आज है? हांजी ने पूछा। (हाँजी को जवाब तुम दे सकते हो, नीचे खाली जगह तुम्हारे लिए है, जवाब लिख सकते हो। नानी, या घर में किसी और बूढ़े व्यक्ति से पूछ कर हांजी को जवाब दे सकते हो।)

'यह तो रही नानी की बात, पर हम लोग भी तो नई चीज़ देखते हैं, जो पहले कभी देखी ही नहीं, ख़्याली ने कहा।

'और पिताजी जब छोटे थे तब भी तो कुछ नया बना होगा', हांजी बोला।

'नानी के समय में, पिताजी के समय में, और हमारे सामने, कौन सी नई चीज़ बनी हैं या पहली बार गाँव में देखी है' होशम सोचते हुए बोला।

'देखते हैं', ख़्याली ने झट कहा।

उन तीनों ने, अपनी नानी, अपने माता-पिता, गाँव के दूसरे बड़े-बूढ़े लोगों से पूछ कर, ऐसे लिखना शुरू किया :

पहली बार देखा, या उनके बारे में सुना :

नानी के समय में	पिताजी के समय में	मेरे सामने

लिखना शुरू तो किया पर जैसे देख रहे हो, ज्यादा नहीं लिखा। क्या तुम सोच कर लिख सकते हो? साथ ही नीचे लिखी चीजों को भी सोच कर भर दो।

अखबार, संकर-गाय, बॉल-पेन, नल, डालडा घी, गाँव में पहला पक्का मकान इन सब को किसके समय के नीचे डालेंगे?

लगता है हमेशा नया सामान बनता रहता है! हाँजी बोला और सब कुछ, कभी न कभी, पहली बार बना,' होशम ने जोड़ा।

ख़्याली बोली, 'पर इसका मतलब है कि ऐसा भी समय रहा होगा जब हल भी नहीं था।

और मकान भी नहीं था। होशन बोला।

'क्या खेत भी नहीं थे?' हाँजी ने पूछा।

तीनों जरा सोचने लगे। अगर कभी ऐसा भी समय था, जब मकान, खेत कुछ नहीं था, तब लोग करते क्या थे, जीते कैसे थे?

'घूमते रहते होंगे', हाँजी ने सुझाया।

'खेती नहीं थी तो खाते क्या थे?' होशम ने पूछा।

ख़्याली ने हँसकर ढेर सारे नाम बताए :

'खीर, माँस, पकौड़े, फल, लड्डू, पूरी, क्यों यही ना?'

तुम बताओ, यही सब खाते थे? या इनमें से कुछ-कुछ? या कुछ और ही? जरा सोच कर बताओ और नीचे लिख दो।

फिर ख़्याली बोली, 'मैं बताऊँ ये गुफ़ाओं में रहने वाले लोग करते क्या थे, और खाते क्या थे?'

हाँजी ने कहा, 'बताया तो मैंने, घूमते रहते थे।'

'और खाना कैसे मिलता था?' होशम ने पूछा।

ख़्याली ने यह तस्वीर बनाई :

हाँजी हँसने लगा, 'इस आदमी के हाथ में क्या है?' ख़्याली नाराज़ होकर बोली 'हँसने की क्या बात है? उसके हाथ में एक बड़ा पत्थर है जिससे वह जानवर को मार रहा है।'

'पत्थर से कैसे शिकार कर सकते हैं?' हाँजी ने पूछा।

'उस समय और कुछ बना ही नहीं था। तो मैंने सोचा, पत्थर से ही मारते होंगे और पत्थर से ही छाल निकालते होंगे।' ख़्याली ने सोचते हुए जवाब दिया।

'हां, पत्थर को नुकीला कर सकते थे, चपटे, भारी, मोटे, पतले, पत्थर इस्तेमाल कर सकते थे।' होशम ने कहा।

'अलग-अलग कामों के लिए, अलग-अलग तरीके के औज़ार बनाते होंगे, हाँजी बोला।

'क्या एक साथ सब बनाए थे? क्या कोई पत्थर के औज़ार बनाने वाला था, जैसे बढ़ई, कुम्हार है?' ख़्याली ने पूछा।

'शायद धीरे-धीरे बने होंगे। एक तरह के बनाए फिर इस्तेमाल कर के देखा, फिर उसे और अच्छा बनाया। औज़ार बनाने वाला? पता नहीं ऐसा कोई था या नहीं' होशम ने जवाब दिया।

'देखो, इस तस्वीर में, जो मुझे शुरू में मिली इस में भी एक आदमी पत्थर से कुछ

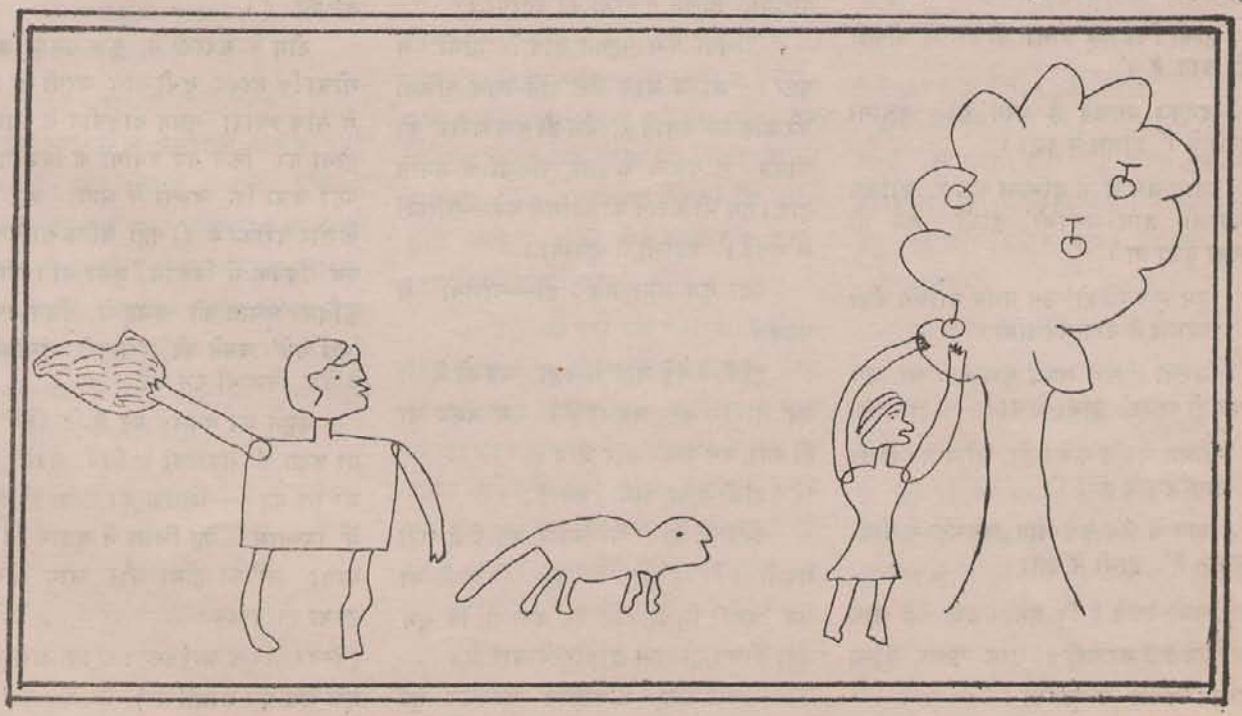

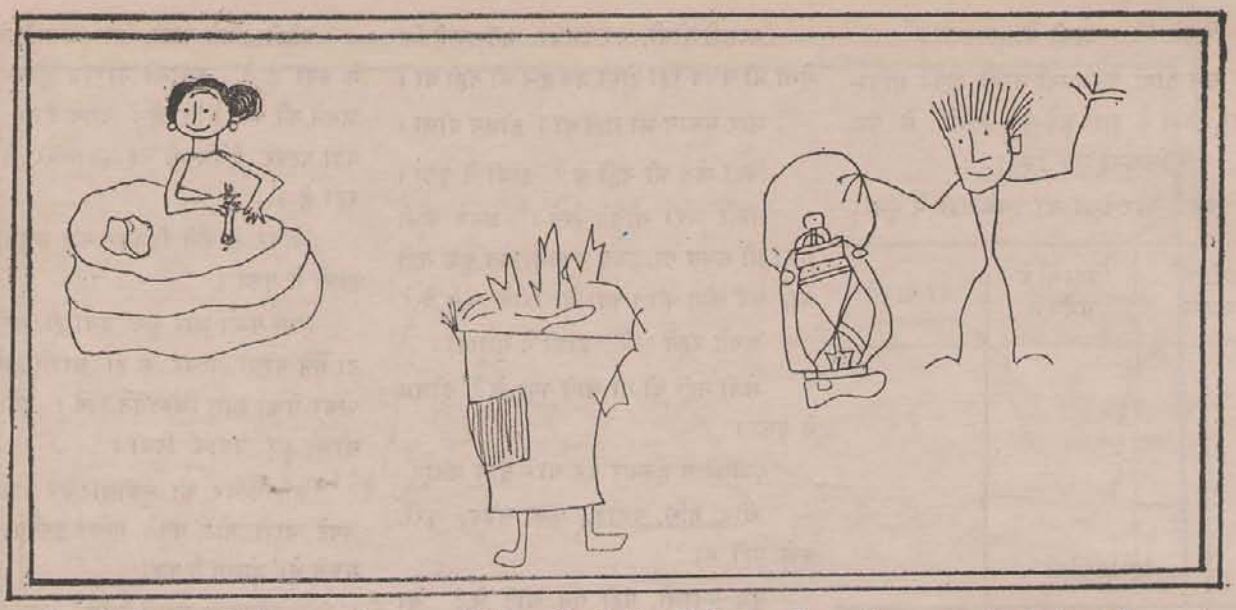

कर रहा है, हांजी ने कहा। तीनों शुरू वाली तस्वीर को ध्यान से देखने लगे। तुम भी देखो, और जो भी तुम्हें दिखता है, उसे लिख डालो।

'आग, आग' होशम ने अचानक कहा। हांजी और ख्याली चौंक कर बोले 'कहां, कहां ?'

'अरे यहां,' होशम बोला।

'यहां ! भागो, बचाओ, भागो,' हांजी चिल्लाकर उठ कर भागने लगा।

होशम ने उसे पकड़ लिया, 'तस्वीर में, भई, तस्वीर में आग है।'

हांजी चिढ़ कर बोला 'तो इस में कौनसी बड़ी बात है।'

'इसका मतलब है आग भी जलाना जानते थे।' होशम ने कहा।

'आग जलाने में मुश्किल क्या है, माचिस सुलगाओ, आग जलाओ', हांजी अब भी बिगड़ा हुआ था।

'तुम भूल रहे हो' उस समय माचिस कहां थी', ख्याली ने याद दिलाया।

'लगता है उस समय कुछ नहीं था, बस पत्थर ही पत्थर', हांजी बोला।

होशम ने हँस कर कहा, 'हाँ पत्थर से ही तो आग जलाते होंगे।'

'गांव में जैसे कई लोग, चकमक से बीड़ी सुलगाते हैं', हांजी ने कहा।

'चलो देखते हैं कि हम पत्थर से आग जला सकते हैं या नहीं। खास पत्थर ढूंढना पड़ेगा', ख्याली ने सुझाया।

तीनों पत्थरों की खोज में निकल पड़े। क्या तुम भी ऐसे पत्थर ढूंढ सकते हो, जिनको आपस में रगड़ने से चिन्गारी निकलती है ?

'घूमते रहना, शिकार करना, इधर-उधर से खाने का जुगाड़ करना, पत्थरों से आग जलाना, पत्थरों से ही औजार बनाना, पत्थर की गुफाओं में ही रहना, क्या वे पत्थर पहनते भी थे ?' हाँजी ने मजाक में कहा।

'जानवरों की खाल पहनते होंगे, या पत्तियाँ,' होशम ने हांजी को बताया।

'पत्तियाँ कैसे पहनते होंगे ?' हांजी ने पूछा। 'शायद आज जैसे दोने-पत्तल पत्तियों को जोड़ कर बनाते हैं, वैसे ही कुछ शरीर को मौसम से बचाव के लिए पत्तियों के बनाते होंगे। हम भी बनाने की कोशिश करें—पत्तियों से कपड़े।' ख्याली ने सुझाया।

क्या तुम बना सकते हो—पत्तियों से कपड़े ?

हाँजी ने बड़े जोश से कहा, 'अब तो मैं भी एक तस्वीर बना सकता हूँ। उस समय था ही क्या, बस पत्थर और आग।"

हाँजी ने यह तस्वीर बनाई :

क्या जो हांजी ने तस्वीर बनाई है सही लगती है ? या गलत ? क्यों ? हांजी को एक चिट्ठी लिखो, उसे यह बताओ, कि तुम क्या सोचते हो इस तस्वीर के बारे में।

—एकलव्य, सामाजिक अध्ययन ग्रुप

(पृष्ठ 3 का शेष अच्छे या बूरे....)

उसने प्रगति की उसे उतने ही विसंगत तरीके से कक्षा में स्थान दिया गया क्योंकि विशेषज्ञों को उससे कामयाबी की उम्मीद नहीं थी।

रोसेन्थाल टीम के इस अध्ययन से ठीक वैसे ही निष्कर्ष निकले जो चूहों के प्रयोग से थे, यानी कि सिखाने वालों के कृत्रिम पूर्वाग्रहों का छात्रों के व्यवहार पर निर्णायक असर होता है। दूसरे शब्दों में अच्छे व बुरे विद्यार्थी शिक्षक ही रचता है और यह उसी की कल्पना की देन है।

टीम के सदस्यों ने कुछ समय तक यह सोचा कि शायद सूची वाले बच्चों की शिक्षक से साथ ज्यादा सघन बातचीत से लाभ हुआ होगा पर किये गये प्रयोगों के विश्लेषण से पता चला कि बच्चों में भाषा और बोलने के तौर तरीकों में ही नहीं बल्कि तार्किक बुद्धि एवं विवेक में विकास हुआ था। एक मात्र कृत्रिम चुनाव की वजह से, जिन बच्चों में 'मूर्ख गधे' बनने की पूरी-पूरी संभावना थी वे तेज विद्यार्थी बन गये।

कहने का मतलब यह है कि किसी छात्र या कक्षा की सफलता के लिये सबसे पहली जरूरत यह है—शिक्षक का छात्रों की सफलता में विश्वास। यह शिक्षा में सुधार का सबसे सस्ता तरीका होगा और लागू करने में उतना ही कठिन।

(डेन्जर स्कूल आईडेक 16/17 डाक्यूमेंट के एक लेख पर आधारित) ○

उत्पादन

पात्र :

1. सूत्रधार
2. मास्टर
3. पाँच व्यक्ति (मशीन निर्माण हेतु)
3. तीन बालक

आवश्यक सामग्री:–

छः छड़ियाँ, घंटी, झंकार ध्वनि, संगीत पार्श्व से स्वर उभरते हैं––"सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा....

(छः व्यक्तियों का समूहगान के साथ कतारबद्ध प्रवेश प्रत्येक के हाथ में छड़ी है। पाँच वृत्ताकार खड़े होकर छड़ियों के सिरे मिलाकर तोते के पिंजरे का आकार बना लेते हैं। एक व्यक्ति पिंजरे के सिरे पर अपनी छड़ी लेकर खड़ा हो जाता है। सूत्रधार का प्रवेश-गीत की समाप्ति)

सूत्रधार : सज्जनो ! यह छोटा-सा नाटक है। इस नाटक का नाम है "उत्पादन" जी हाँ उत्पादन।

यह जो आप देख रहे हैं––एक मशीन है। विशाल मशीन बहुत पुरानी मशीन। इतनी पुरानी कि इसके पुर्जे घिस गये। मशीन का यह चालक इसी मशीन का एक हिस्सा है। यह नायक नहीं, खलनायक ! नहीं !! नायक भी और खलनायक भी। हाँ एक बात मैं भूल गया। यह मशीन विदेशी है। इसको बनाने वाला विदेशी था। वह जिंदा नहीं है, मर गया है। उसका नाम था––लॉर्ड मेकॉले।

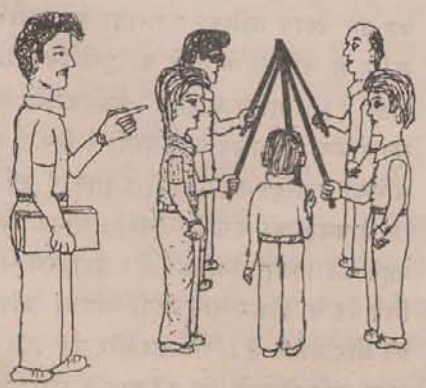

मशीन (सामूहिक)–मेकॉले ! मेकॉले !!

सूत्रधार : मशीन इतनी पुरानी कि सब पुर्जे घिस गये हैं। मशीन पर जंग लग गयी।

सूत्रधार : इस मशीन का कच्चा माल है, बच्चे। जी हाँ, छोटे-२ होनहार बच्चे।

(तीन बच्चे लुकाछिपी खेलते हुए मंच पर प्रवेश करते हैं।)

सूत्रधार : ये हँसते खेलते बच्चे। स्वस्थ सुन्दर होनहार बच्चे। ये एक के बाद एक मशीन में डाले जायेंगे। फिर मशीन से ये निकलेंगे उत्पादन के रूप में। हमारी शिक्षा व्यवस्था का उत्पादन। हमारे विकासशील भारत का उत्पादन। तो अब शुरू होता है नाटक उत्पादन।

(सूत्रधार नेपथ्य में चला जाता है।)

(स्कूल की घंटी बजती है। बच्चे प्रसन्न होकर दौड़ते आते हैं, एक कतार में खड़े हो जाते हैं। एक घंटी बजती है। मशीन चालक एक बालक को मशीन में धकेलता है।

मास्टर सा. : "अ" का उच्चारण करता है। बालक 'अ' का उच्चारण करता है। सामूहिक स्वर में अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः का उच्चारण सुनाई देता है इस प्रक्रिया के दौरान मशीन बने व्यक्ति अंदर गए बालक के चारों ओर घूमते जाते हैं। घंटी बजने पर वे रुकते हैं।

बालक मशीन से बाहर निकलता है। भौंचक्का सा चारों ओर देखता है। अपाहिज, लूला, लंगड़ा। चलता हुआ स्टेज के एक किनारे पर खड़ा होकर भौंचक्का सा देखता रहता है। दूसरे बालक को मशीन में डाला जाता है। चालक 'ए' का उच्चारण करता है। बालक 'ए' का उच्चारण करता है। सामूहिक स्वर में, ए, बी, सी, डी, ई, ...जेड का उच्चारण सुनाई देता है।

बालक मशीन से बाहर निकलता है। भेंगा, टेढ़े, मेढ़े, हाथ पाँव, कमर झुकी हुई। चारों ओर आश्चर्य से देखता है। धीरे-धीरे एक ओर आगे बढ़कर स्टेज के कोने में खड़ा हो जाता है।

मास्टर सा. : तीसरे बालक को पकड़ता है। बालक डरकर पीछे भागना चाहता है। मुँह से भय की अभिव्यक्ति एवं हाथों से इंकार करता है। मास्टर उसे जबर्दस्ती खींचकर मशीन में धकेल देता है।

मास्टर सा. : 'एक' बोलते हैं। सामूहिक स्वर १, २, ३, ...१० सुनाई देते हैं।

बालक मशीन से बाहर निकलता है। टेढ़ा-मेढ़ा अपाहिज।

(सूत्रधार का प्रवेश)

(तीनों अपाहिज बच्चों को एक-एक करके ठीक करने का प्रयास करता है। परन्तु बच्चे ठीक नहीं होते) तब वह दर्शकों से कहता है कि आपने इस मशीन का उत्पादन देख लिया है। अब तो आप, समझ गये होंगे यह (मशीन की ओर इशारा करके) है हमारी भारतीय शिक्षा व्यवस्था। ●

*'यह नाटक केरल शास्त्र साहित्य परिषद् ने भारत विज्ञान कला मोर्चा के दौरान म.प्र., राजस्थान और दिल्ली में अनेकों जगह प्रस्तुत किया। नाटक के हिन्दी अनुवाद और प्रस्तुतीकरण में 'एकलव्य' के कार्यकर्त्ता ने सहयोग किया। ●

प्रश्नः—किसी पत्थर को पृथ्वी से ऊपर फेंकते हैं तो क्या कारण है कि पत्थर फेंकने वाले के ही आस-पास गिरता है जबकि पृथ्वी 30 कि.मी. प्रति सेकेण्ड की गति से अपनी धुरी पर घूमती है।

शान्तनु कुमार देवरांग
सांकरा, जगन्नाथपुर, बालोद

उत्तरः—इस सवाल को समझने के लिए कुछ सामान्य अवलोकनों पर विचार करें। रेलगाड़ी में, बस में यात्रा करते समय यदि एक गेंद को गाड़ी के अन्दर ही उछालें तो क्या होगा? यदि चलती गाड़ी में ऊपरी बर्थ से डिब्बे के फर्श पर कूदें तो क्या होता है? शायद आपने यह किया होगा। जब हम गेंद को ठीक अपने ऊपर उछालते हैं तो गेंद वापिस हमारे ऊपर ही आकर गिरती है पीछे नहीं। बर्थ से कूदने पर भी हम पीछे वाले बर्थ तक नहीं पहुँचते। किन्तु किसी चलते वाहन में से बाहर कुछ फेंकने पर वह पीछे की ओर गिरती प्रतीत होती है। चलते वाहन में हाथ बाहर निकालने पर थपेड़े लगते हैं और ऐसा लगता है, जैसे बाहर की हवा हाथ को पीछे धकेल रही हो। जबकि वाहन गाड़ी के अन्दर हमें (यदि शरीर का कोई हिस्सा गाड़ी के बाहर न हो) ऐसा कुछ महसूस नहीं होता। गाड़ी में तो गति की अनियमितता के कारण लगे दचकों के प्रवाह में इतना अन्तर क्यों? रेलगाड़ी के बाहर की हवा गाड़ी के आगे चलने के कारण पीछे जाती प्रतीत होती है, किन्तु रेलगाड़ी के अन्दर की हवा रेल-गाड़ी के साथ ही चलती है और उसी की गति से, इसलिए जब कोई चीज वास्तव में जिस स्थान पर चलती गाड़ी के बाहर फेंकी जाती है उससे आगे जाकर गिरती है किन्तु तब तक गाड़ी और भी ज्यादा आगे बढ़ जाती है। इसलिए गाड़ी में बैठे हुए व्यक्ति को यह लगता है जैसे वह वस्तु पीछे की ओर गिरी है। यदि किसी चलते वाहन में से कोई वस्तु बाहर गिरा दी जाए और उसी जगह वाहन को ब्रेक लगा दिया जाए तो वह वस्तु आगे की ओर गिरती प्रतीत होगी। गाड़ी के अन्दर उछाली जाती है तो वह ऐसा ही व्यवहार करेगी जैसे उसे रुके हुए वाहन में या घर के कमरे में उछाला गया हो। ख़ासकर यदि गाड़ी में दचके बिल्कुल न लग रहे हों। और जो चीज गाड़ी के बाहर फेंकी जाती है वह पीछे जाती प्रतीत होती है।

पृथ्वी के संदर्भ में इन बातों पर ध्यान दें।

1. पृथ्वी अपनी धुरी पर एक समान गति से लगातार घूम रही है और इसकी गति में वाहनों में लगने वाले दचके बिल्कुल नहीं होते।

2. पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण बल हवा को भी अपनी ओर खींचता है। इससे पृथ्वी के ऊपर की हवा भी पृथ्वी के साथ बंध जाती है। पृथ्वी के घूमने पर वह भी घूमती है। यानी यहाँ स्थिति सामान्य तौर पर वाहन के अंदर की है और कोई चीज को ऊपर फेंकने पर वह ठीक वहीं आएगी जहाँ रुकी हुई पृथ्वी पर उसे गिरना चाहिए। वास्तव में किसी चलते वाहन की ही गति से चलती है इससे बाहर फेंकने पर इसकी गति धीरे-धीरे कम हो जाती है। चूंकि हवा इसके चलने का प्रतिरोध करती है। वाहन की गति बनाए रखने के लिए ईंधन से ऊर्जा मिलती रहती है लेकिन बाहर फेंकी गई वस्तु के लिए ऐसा कोई स्रोत नहीं है। इसलिए वह पीछे की ओर गिरती है। पृथ्वी का वायुमंडल पृथ्वी के आकर्षण बल के कारण उसकी ही गति से घूम रहा है। इस वायुमंडल में फेंकी गई वस्तु पृथ्वी के साथ ही है (जैसे वाहन के अंदर) न कि उससे अलग। तुम चलते-चलते अपने हाथ से गेंद छोड़कर देखो और पता करो कि वह कहाँ गिरती है? जहाँ छोड़ी थी उसी स्थान पर या उससे आगे या उससे पीछे?

प्रश्नः—पैर में चोट लगने पर जाँघ में सूजन क्यों आ जाती है?

वीरेन्द्र खरे, चांदौन

तुमने देखा होगा कि कभी-कभी शरीर में रगड़ लग जाने पर खून तो नहीं निकलता किन्तु पानी के समान एक पदार्थ निकलता है। यह द्रव पदार्थ लसिका कहलाता है। हमारे शरीर में लसिका के बहने की पूरी व्यवस्था होती है। बारीक-बारीक कोशिकाओं से शुरू होकर ज्यादा बड़े व्यास वाली वाहिकाएँ। लसिका प्रवाहित करने वाली कोशिकाएँ पूरी बाहरी चमड़ी तक में फैली रहती है। लसिका के बहने की दिशा निश्चित है। उदाहरण के लिये पैर से होकर जाने वाली लसिका जाँघ की ओर जाती है। लसिका और उसे इधर-उधर पहुँचाने वाले तंत्र का काम है, शरीर में

प्रवेश करने वाले कीटाणुओं व धुसपैठी तत्वों से निपटना। रक्त में और लसिका में विशेष प्रकार की कोशिकाएँ होती हैं जिन्हें श्वेत रक्त कोशिकाएँ कहते हैं। इन कोशिकाओं का काम लाल रक्त कोशिकाओं की तरह ऑक्सीजन को इधर से उधर पहुँचाना नहीं है। इसीलिये इनमें हीमोग्लोबिन नहीं होता। इन श्वेत रक्त कोशिकाओं की जिम्मेदारी है शरीर की रोगाणुओं के आक्रमण से रक्षा। जब भी कोई कीटाणु बाहर से शरीर में घुस आता है तो ये कोशिकाएँ इन कीटाणुओं से भिड़ जाती हैं और उन्हें नष्ट करने की कोशिश करती हैं। इसके अलावा शरीर के कार्यों में उत्पन्न हानिकारक पदार्थ भी रक्त और लसिका द्वारा ग्रहण कर लिए जाते हैं। रक्त को गुर्दे (किडनी) छानते हैं जिससे हानिकारक तत्व निकल जाते हैं। जब पाँव में चोट लगती है तब घाव में बहुत से कीटाणु घुस जाते हैं और लसिका की कोशिकाएँ नष्ट हो जाती हैं। ये टूटी-फूटी कोशिकाएँ और कीटाणु लसिका के साथ ऊपर की ओर बहते हैं। जाँघ में एक लसिका ग्रंथी होती है जहाँ लसिका को छाना जाता है और हानिकारक कीटाणुओं व अन्य कणों को वहीं रोक कर नष्ट किया जाता है। पैर में लगे घाव के पकने में उत्पन्न कीटाणुओं आदि को लसिका के बहने के तंत्र की इस दिशा में पड़ने वाली पहली ग्रंथी में रोका जाता है। इससे ही जाँघ की यह ग्रंथि मोटी हो जाती है और ग्रंथी के पास का हिस्सा सूजा हुआ लगता है। यह सूजन घाव को और अधिक बिगड़ने न देने के प्रयास का प्रतीक है।

प्रश्न:–छिपकली अपनी पूँछ छोड़ कर क्यों भाग जाती है तथा छिपकली की पूँछ का टुकड़ा शरीर से अलग हो जाने पर भी क्यों हिलता रहता है?

–डी. आर. नारवानी, चकरभाटा केम्प

उत्तर:–जीवों को जिंदा रहने के लिए संघर्ष करना पड़ता है। भोजन प्राप्ति व अपनी रक्षा करना (दूसरों का भोजन बन जाने से बचना) हर जीवित के लिए आवश्यक है। शत्रुओं से बचने के लिए इनमें अलग-अलग प्रकार के बचाव साधन हैं। इनमें से कई आक्रामक हैं; जैसे बिच्छू या मधुमक्खी का डंक, गुलाब के काँटे आदि और कुछ शत्रु को धोखा देने वाले तरीके जैसे शरीर का रंग आस-पास की वस्तु जैसे बन कर निश्छल बैठ जाना, जिससे ऐसा लगे कि वहाँ कोई जीवित प्राणी है ही नहीं। (अन्य प्राणियों पर शिकार करने वाले जीव भी कई ऐसे तरीके अपनाते हैं। क्या आप इसके कोई उदाहरण जानते हैं?) कई प्राणी शत्रु के हाथ से बचकर निकल भागने का सोचते हैं। छिपकली का पूँछ को छोड़ कर भागना व उसके टुकड़े का हिलते रहना इसी से संबंधित है।

छिपकली में एक अद्भुत क्षमता होती है। जब कोई शत्रु उसका पीछा कर रहा होता है तो वह अपनी पूँछ को छोड़ सकती है। इसके लिए उसकी रीढ़ की हड्डी के निचले हिस्से में कुछ कमजोर सतह रहती है। यह सतह उसके कौड़ल वरटिब्रेट में रहती है। यहीं से उसकी पूँछ टूटती है। थोड़े समय बाद पूँछ दुबारा निकल आती है किन्तु यह पूँछ पहली की अपेक्षा भिन्न होती है। पूँछ में कोई हड्डी नहीं होती। हड्डियों के बजाय उसमें अविभाजित कार्टिलेज की ट्यूब होती है जो इस पूँछ को आकार देती है।

पूँछ के टूट कर पीछे रह जाने पर पीछा करने वाला शत्रु कुछ क्षणों के लिए हतप्रभ रह जाता है। उसे समझ नहीं आता कि वह पूँछ को पकड़े या आगे भाग रही छिपकली को। कई छिपकलियों की पूँछ टूटने के बाद हिलती भी रहती है। इसमें शत्रु और भी ज्यादा भ्रमित हो जाता है। चूंकि पूँछ पास होती है, सामान्य तौर पर शत्रु का पहला आक्रमण उसी पर होता है। इतना समय छिपकली के भागने के लिए काफी है। हाँ पर इन सब के बावजूद कुछ शत्रु छिपकली को पकड़ ही लेते हैं। एक बात और; छिपकली की पूँछ छुड़वाना सरल काम नहीं है। छोटे-छोटे खतरों पर वह अपनी पूँछ नहीं छोड़ती, हाँ जब उसे लगता है कि अब पकड़ी जाएगी और पकड़ने पर मार दी जाएगी तभी वह अपनी पूँछ छोड़ती है।

प्रश्न:–क्या सांड केवल लाल कपड़े से ही भड़कता है?

उत्तर:–सांड-युद्ध स्पेन, पुर्तगाल आदि देशों का लोकप्रिय खेल है। इस खेल में एक व्यक्ति सांड को उत्तेजित करने के लिए लाल कपड़े का प्रयोग करता है। जब वह लाल कपड़ा सांड की तरफ हिलाता है तो सांड उत्तेजित हो जाता है और हमला करता है। शायद इसी खेल के कारण यह धारणा बन गई है कि सांड लाल कपड़े को देखकर उत्तेजित हो जाता है। लेकिन लोगों की यह धारणा गलत है कि लाल रंग की वस्तु सांड को उत्तेजित करती है।

परीक्षणों से यह निश्चित हो चुका है कि सांड रंग के प्रति अन्धा होता है, अर्थात् रंगों का अंतर नहीं जान सकता है। कपड़े को हिलाने की क्रिया ही सांड को उत्तेजित करती है, न कि उसका रंग। सांड सफेद, पीले, हरे या काले कपड़े को हिलाने पर भी उतना ही उत्तेजित होता है, जितना लाल कपड़े को हिलाने से।

सांडों के साथ युद्ध करने वाले व्यक्ति भी इसको जानते हैं और गुप्त रूप से स्वीकार भी करते हैं।

प्रश्न–मक्खियाँ अपनी टाँगें क्यों रगड़ती है?

उत्तर:–मक्खी अपना भोजन मुँह से काट नहीं सकती। भोजन करने के लिए वह लार व अन्य पाचक रस भोजन पर टपकाती हैं। इससे बने घोल को चूस लेती है। मक्खी की लार में बहुत से रोगों के कीटाणु होते हैं, जिन्हें यह हमारे भोजन पर छोड़ती है और उसे खाने से हर साल लाखों लोग बीमार होते हैं।

वास्तव में मक्खी के पूरे शरीर पर बारीक रोएँ होते हैं। मक्खी अपने पैरों से मैल हटाने के लिए पैरों को रगड़ती है। ऐसा करने में मक्खी अपने रोओं पर चिपके मैल का कुछ अंश हमारे भोजन पर गिरा देती है। इस मैल में रोगों के कीटाणु होते हैं, जो हमारे भोजन में मिल जाते हैं। इस भोजन को खाने से हम बीमार पड़ जाते हैं। मक्खियाँ मुख्यत: मियादी बुखार, तपेदिक और हैजा रोग फैलाती हैं। जिस तरह से हम सफाई के लिए रगड़-रगड़ कर नहाते हैं, मक्खी भी सफाई अपने पैरों को रगड़ कर करती है। ○

मैंने तो पहले ही कहा था...

—तुलसीराम हरणे

लोग कहते हैं हमारा देश कृषि प्रधान देश है। परन्तु इसे यदि छुट्टियों का देश कहा जाय तो भी गलत नहीं होगा! सरकारी छुट्टियाँ महत्वपूर्ण धार्मिक पर्वों पर हो ही जाती हैं। इसके बावजूद भी शालाओं में किसी महत्वपूर्ण नेता के देहान्त पर, शिक्षकों के परिवार के किसी सदस्य के स्वर्गवास पर, छुट्टियाँ सावन की वर्षा के समान होती ही रहती है।

मैं नागपंचमी की शासकीय छुट्टी के एक दिन पहले अनुवर्तन करने गया, परन्तु शाला में एक दिन पहले भी नागपंचमी की छुट्टी कर दी गई थी। अतः हमें बैरंग ही लौटना पड़ा।

दूसरी बार अनुवर्तन करने गया तब शाला में प्रधान पाठक मिले। उन्होंने टाइमटेबल मुझे दिखाया। उसमें विज्ञान का कालखण्ड कक्षा छठवीं, सातवीं, और आठवीं के लिये एक ही रखा गया था। जबकि प्रत्येक कक्षा के लिए दो-दो कालखण्ड आवश्यक हैं। कुल छः कालखण्ड प्रति सप्ताह तीन दिन में दो-दो करके दिये जाना तय है। मैंने प्रधान पाठक से कहा—कृपया आप समय विभाग चक्र में परिवर्तन कर विज्ञान के लिये दो कालखण्ड लगातार रखिये। मगर उन्होंने कहा—इससे हमारा टाइम-टेबल विषयवार एडजस्ट नहीं हो पा रहा है। (जबकि जिले में और कहीं समस्या नहीं आती) उन्होंने अपनी असमर्थता जाहिर की। हमारी बातचीत के समय कक्षा सात के विज्ञान शिक्षक, प्रधान पाठक के पास बैठे हुए थे। प्रधानपाठक ने कहा आपका कालखण्ड लगने वाला है। आप कक्षा में जाकर अध्यापन कीजिये, हरणेजी अनुवर्तन करने आये हैं। सातवीं और आठवीं के कालखंड का समय एक ही है। घंटी बजने के पूर्व मैं कक्षा छठवीं के विज्ञान शिक्षक से मिला जो संस्कृत विषय का अध्यापन करा रहे थे।

मैं कक्षा सातवीं में पहुँचा। शिक्षक कीड़ों की दुनिया का अध्याय निकालकर, उसका पठन करने लगे। फिर बच्चों को कीड़ों की दुनिया अध्याय निकालकर पुस्तक में देखने का निर्देश दिया। छात्रों का मन पढ़ने में नहीं लग रहा था, मैंने देखा कक्षा में 55 छात्र उपस्थित थे। जो सामाजिक अध्ययन, हिन्दी, अंग्रेजी की पुस्तकें खोलकर बैठे थे। आपस में बात कर रहे थे। मात्र सात आठ छात्रों के हाथों में विज्ञान की पुस्तके थी। शिक्षक जोर-जोर से पढ़कर पुस्तक में आये चित्र को बतलाकर उसके विषय में अलग से जानकारी दे रहे थे। उन्होंने कीड़ों को मारने के लिये बी एच..सी. पाउडर और चहामार दवाई के विषय में जानकारी दी।

विज्ञान को इस तरह तो नहीं पढ़ाया जाता। मैंने पूछा—आपके कितने अध्याय हो चुके हैं? उन्होंने बताया मृदु जल और कठोर जल, जड़ पत्ती, पत्तियों की जानकारी के अध्याय हो चुके हैं। (इस नाम का तो कोई अध्याय नहीं है) अब कीड़ों की दुनिया शुरू किया है। एक छात्र से मैंने पूछा—तुमने कितने प्रयोग किये हैं? छात्र ने कहा—हमें प्रयोग नहीं करवाये जाते, पुस्तकें पढ़वा दी जाती हैं। प्रश्न लिखने को शिक्षक कहते हैं हम प्रश्न लिख कर लाते हैं, सर उत्तर लिखवा देते हैं। मैंने कहा—आसुत जल किसे कहते हैं?

मृदु जल किसे कहते हैं?
कठोर जल क्या है?

छात्र बिल्कुल मौन रहे, जवाब नहीं दे पाये। मैंने कहा—आप उस अध्याय को सावधानी पूर्वक पढ़िये, आपको जानकारी मिल जाएगी। तब एक छात्र ने कहा—सर जो वर्षा का पानी गिरता है, उसे हम एकत्र कर लेते हैं, वह आसुत जल है, ऐसा मैंने पढ़ा है।

शिक्षक ने कहा—सर बड़ी मुश्किल है, प्रयोग के लिये सामान नहीं मिल पाता, अलमारी खुलती नहीं, है, आठवीं के शिक्षक के पास चाबी रहती है। वे समय पर सामान उपलब्ध नहीं कराते। वे शिक्षक भी जो कक्षा आठ का अध्यापन कर रहे थे हमारी बातचीत को ध्यान से कमरे की खिड़की के पास खड़े होकर सुन रहे थे एवं हमारे क्रिया-कलापों का निरीक्षण भी कर रहे थे, —बोले यह सरासर गलत है। आप प्रयोग विधि से बालकों को नहीं पढ़ाते। मुझसे सामान भी नहीं लेते। **मैंने पहले ही कहा था कि किसी भी समय अनुवर्तन में आप पकड़े जाओगे।** आज यह स्पष्ट हो गया। प्रधानपाठक के सामने भी सातवीं के शिक्षक ने कहा—मुझे प्रयोग का सामान नहीं दिया जाता। प्रधान-पाठक ने कक्षा आठवीं के शिक्षक के पक्ष में कहा—ये सामान देते हैं मगर ये महाशय उनका उपयोग नहीं करते। कक्षा छठवीं के शिक्षक बराबर प्रयोग करवाते हैं।

प्रधानपाठक और कक्षा आठ के शिक्षक ने कहा—जब यह विज्ञान प्रयोग वाली है तो प्रयोग करवाना ही चाहिये। हताश होकर कक्षा सातवीं के शिक्षक बोले—सर आप बताइये मैं कैसे कक्षा में विज्ञान का अध्यापन करूँ?

तब मैंने कहा कि बच्चों को टोलियों में बैठाकर, उन्हें किट सामग्री देकर उनसे प्रयोग करवाइये। प्रयोग के समय जो अवलोकन आये, बच्चों को उन्हें नोट करने को कहें। पुस्तक में दिये प्रश्नों एवं अन्य प्रश्नों की सहायता से किये गये कार्यों का विश्लेषण कर निष्कर्ष निकलवाना चाहिये। आप एक बार इस पद्धति से शिक्षण करें तो आपको अनुभव हो जायगा। जिन अध्यायों के लिये परिभ्रमण जरूरी ही है, उनके लिये परि-भ्रमण करायें। परिभ्रमण के पहले बालकों को परिभ्रमण के संबंध में निर्देश दें तथा जो भी सामग्री परिभ्रमण के लिये आवश्यक है एकत्र करने दें। उदाहरण के लिये कीड़े, पत्तियाँ आदि। उनको इकट्ठा कर सम्भालकर

रखने के निर्देश अवश्य दें, परिभ्रमण पर जाने के पहले आवश्यक सामग्री जरूर साथ ले जावें, परिभ्रमण में इकट्ठी की गई वस्तुओं के माध्यम से इस अध्याय को आगे बढ़ावें। साथ में चित्र भी बनवायें जावें।

प्रधानपाठक को भी विज्ञान की प्रयोग विधि बतायी--इसमें बच्चों को प्रयोग करके उनके अवलोकन लिखकर उनका विश्लेषण कर स्वयं निष्कर्ष निकालना होता है। विज्ञान सामग्री की समाप्ति की सूचना संगम केन्द्र पर पहुँचाकर आवश्यक सामग्री प्राप्त करने का प्रयास करें तो ज्यादा अच्छा होगा। हमने सुझाव दिया।

छात्रों को 'चकमक' एवं 'होशंगाबाद विज्ञान' पत्रिका का अगस्त वाला अंक दिखाया। बच्चों ने बहुत पसंद किया। छात्रों ने पत्रिका की माँग की। हम उचित संख्या में पत्रिका शिक्षक के हाथ पहुँचाने का वादा कर कक्षा आठवीं में पहुँचे। शिक्षक बैठे हुए थे। छात्र कापियों में प्रश्न लिख रहे थे। शिक्षक ने बताया--अब तक हम सजीव, निर्जीव गति के ग्राफ, शरीर के आंतरिक अंग जैसे अध्याय निपटा चुके हैं और आज ध्वनि शुरू किया है। मैंने कहा आप पढ़ाइये--उन्होंने कहा आप आये हैं, बैठिये, छात्रों से प्रश्न पूछिये--पढ़ाना तो होता रहेगा। मैंने पूछा--आपने जन्तुओं का जीवन-चक्र नहीं पढ़ाया तो उन्होंने बताया कि मक्खी का जीवन-चक्र मैंने पढ़ा दिया है। उसी के आधार पर मच्छर और मेंढक का अध्याय हो जायगा। मेंढक के अंडे ही नहीं मिले? (अन्य शालाओं में न जाने कैसे मिल जाते हैं।) **प्रयोग अपनी जगह पर है। बच्चों को ज्ञान हो जाना चाहिये। बगैर प्रयोग के भी छात्र सफल हो जाते हैं। विगत परीक्षाफल से आप जानते ही होंगे?** मैंने कहा भई प्रयोग कराना जरूरी है। फूल और फल वाला अध्याय इसी माह में आप करते तो ज्यादा अच्छा होता क्योंकि अधिक फूल और फल आपको मिल जाते। बेलों, फूल और पौधों पर प्रयोग हो जाते। बच्चों की जानकारी में वृद्धि हो जाती। विज्ञान में संकेत भी इस अध्याय की ओर है। कुछ अध्याय तो ऐसे हैं जो निश्चित समय पर कराना जरूरी है। जैसे--फसलों के दुश्मन, जंतुओं का जीवन-चक्र, फूल और फल, पौधों में प्रजनन। बाकी अध्याय आगे पीछे किये जा सकते हैं। शिक्षक ने कहा--अब ऐसा ही कर लेंगे।

मैंने छात्रों से जानकारी बाबत् सर्वेक्षण प्रपत्र भरवाया जो 60, 65 छात्रों में केवल 23 छात्र ही भर पाये। **बाकी छात्रों को अनुपयुक्त या मूर्ख कहकर शिक्षक ने कक्षा से बाहर कर दिया।**

इसके पश्चात् मैंने छात्रों से पूछा--तुमने इस अध्याय में कौन-कौन से प्रयोग किये--छात्रों ने कहा प्रयोग नहीं करवाये जाते। कक्षा छठवीं के छात्रों से मैंने पूछा अभी तक आपने कितने प्रयोग किये? छात्रों ने बताया हमें प्रयोग नहीं कराते, अध्याय पढ़ा दिये जाते हैं। अंत में शिक्षक को हमने 'चकमक' पत्रिका एवं होशंगाबाद विज्ञान पत्रिका दिखाई, बच्चों को देखने को दी। हमने पूछा एक 'चकमक' की प्रति, डाक द्वारा आपकी शाला को मिली होगी। उन्होंने बताया कोई प्रति हमें नहीं मिली।

छात्रों ने चकमक को बहुत पसंद किया। होशंगाबाद विज्ञान भी छात्रों को अच्छी लगी। उन्होंने पत्रिका की माँग शिक्षक से की। हमने छात्रों से पत्रिका की कीमत एकत्रित कर शिक्षक को एक लिस्ट बनाने को कहा। हम पत्रिका आपकी शाला में पहुँचा देंगे। **तब उन्होंने अपना अजीबोगरीब सुझाव प्रधान पाठक एवं हमारे समक्ष रखा--हम क्यों छात्रों का इतना पैसा बेकार करें? एक प्रति चकमक और होशंगाबाद विज्ञान की खरीद लेते हैं उसी से सब बच्चों को ज्ञानार्जन करवा देंगे।**

जब बच्चे खरीदना चाहते हैं तब एक पत्रिका का सुझाव थोड़ा अटपटा लगा। एक पत्रिका पूरी शाला की समस्या कैसे हल कर सकती है?

संगम केन्द्र, हरदा

बाल टिप्पणी

--चन्द्रकांत वायगांवकर

मैं उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के प्रांगण में पहुँचा। वहाँ नन्ही-नन्ही बलिकाओं को हाथ में "बाल वैज्ञानिक" पुस्तक लिये खड़ी देखकर सोचने लगा कि इन बालिकाओं को यहाँ क्यों बुलाया गया? आखिर मैं एक साथी से पूछ ही बैठा, प्रत्युत्तर में उसने कहा--इन्हें आज प्रादर्श पाठ पढ़ाया जावेगा। उत्तर सुनकर मैं अन्य साथियों के साथ उस कक्षा में पहुँचा जहाँ प्रादर्श पाठ दिया जाने वाला है। हम सभी अपने स्थान पर बैठ गये। कुछ ही समय बाद बाहर खड़ी सभी छात्राएँ भी उसी कक्ष में आकर बैठ गईं।

अध्यापक महोदय आये। उन्होंने पाठ प्रारंभ किया और बीस मिनिट बाद पाठ समाप्ति की घोषणा हुई। मैं सोचने लगा। क्या? यह प्रादर्श/आदर्श पाठ हुआ। इसमें न तो चर्चा हुई न चित्र बने, न तालिका बनी, न टोलियां बनी और छात्रायें भी निष्क्रिय रहीं। शिक्षक मात्र सक्रिय रहे। प्रायोगिक कार्य भी केवल औपचारिकता वश ही करवाया गया।

मैंने इस पाठ पर अपनी टिप्पणी देते हुए साथी से कहा--एक बार कुछ शिक्षा शास्त्री एक विद्यालय में शिक्षण कैसे होता है, देखने के उद्देश्य से पहुँचे। उन्होंने वहाँ देखा कि शिक्षक बोले जा रहे हैं, बच्चे मुख पर अंगुली रखे अनुशासन बनाये रखने हेतु निष्क्रिय चुपचाप बैठे हैं। तब उन्होंने प्रतिक्रियास्वरूप यह शब्द कहे, "यह स्कूल नहीं कारागार है।"

इस पाठ के वक्त भी मुझे यही अनुभव हुआ। मैं बाहर जाने हेतु उठा वैसे ही घोषणा हुई अब यह पाठ पुनः होगा। मैं वहीं बैठ गया।

अबकि बार कक्षा में प्रवेश करते ही शिक्षक महोदय ने छात्राओं की टोलियां बनवाईं। तालिका, ध्रुवों चुम्बकीय, अचुम्बकीय वस्तुओं की अवधारणा भी छात्राओं को स्पष्ट हुई, श्यामपट पर तालिका बनी, नालचुम्बक और छड़चुम्बक के चित्र भी बनाये गए। छात्राओं द्वारा सुव्यवस्थित प्रायोगिक कार्य भी किया गया। शिक्षक महोदय टोलियों में गये, उन्होंने बच्चों से प्रश्न भी पूछे। बदले में उन्हें संतोषप्रद उत्तर भी मिले पूर्ण कालखण्ड चर्चा में बीता, जिसमें छात्राओं ने भाग लिया। प्रश्नों के उत्तर छात्राओं ने उत्तर पुस्तिका में भी लिखे, यह पाठ हम सभी को बहुत अच्छा लगा। क्योंकि पाठ में चर्चा, प्रश्न उत्तर, प्रायोगिक कार्य आदि आकर्षण के बिन्दु रहे। उन्हीं बिन्दुओं ने पाठ को रुचिकर, सरल एवं बोधगम्य बनाया।

अबकि बार मैं कुछ टिप्पणी करता उससे पूर्व ही एक छात्रा ने अपनी सहेली को पास बुलाकर कहा--"अरी, सुन अधिक मजा तब आया जब नए सर ने पढ़ाया, बालिकाएँ एक-एक करके नमस्ते शब्द कहकर चली गईं, परन्तु उस नन्ही बालिका की यह बाल-टिप्पणी मेरे मानव पटल पर अमिट छाप छोड़ गई।

सहा. शिक्षक, नामली (रतलाम)

उसका स्कूल

—नवीन सागर

यह बहसों का अड्डा है। दुनिया भर की बातें, इस सरकारी क्वार्टर के लॉन में रोज शाम से रात तक चलती रहती हैं। प्रोफेसर अखिलेश न सिर्फ़ कालोनी में बल्कि पूरे शहर में इस बात के लिए जाने जाते हैं कि उनसे किसी भी मुद्दे पर बहस कर लीजिए, वैसे वे खुद मनुष्य की उत्पत्ति उसकी भाषा और शिक्षा पर बातें करना ज्यादा पसंद करते हैं। राजनीति में कोई खास दिलचस्पी उन्हें नहीं है मगर सिर पर आ ही जाए तो पीछे नहीं हटते। वे बातचीत के दौरान, और वैसे भी, मोटे फ्रेम का चश्मा लगाते हैं। उनका चौकोर चेहरा, चौड़े और गोल कंधों के ऊपर नम्र विजेता-भाव में सदैव मुस्कराता रहता है। जब वे बोलते हैं तो उनकी उठी हुई नाक के सिरे से माथे पर दो रेखाएँ एक दूसरे से थोड़े फासले पर उभर आती हैं।...एक झटके से उनकी रेखाएँ विलीन हुईं, उन्हें कुछ याद हो आया और वे मंत्रमुग्ध लोगों से क्षमा माँगते हुए सधे कदमों से भीतर चले गए।

सूने रोशन कमरों के परदे हटाते हुए वे बरामदे में पहुँचे। बाई आँगन धो रही थी। बाई ने देखा कि वे कुछ कहना चाहते हैं तो हाथ रोक दिया।

"सुधा ने कुछ बताया कि नहीं?" प्रोफेसर ने अपने खास अपनत्व भरे लहजे में पूछा।

'मिली ही कहाँ? न सुबह न अब।"

"कल से तो और भी नहीं मिलेंगी। कालेज पढ़ाने जाया करेंगीं।" सुनते ही बाई के टेढ़े-मेढ़े पीले दाँत खुल गए। वह प्रसन्नता में हँसने लगी और दो कदम आगे को बढ़ गयी। बोली, "चलो मेम साहब की इच्छा पूरी हुई। पूरे साल उपास किया। भगवान ने अब जाके सुनी।"

"लेकिन पहले यह तो सोचो कि रिंकी और पिण्टू को संभालेगा कौन? मेम साहब तो दिन भर कालेज में रहेंगी।" प्रोफेसर का स्वर अत्यंत घरेलू था।

अरे हाँ! बाई ने यह तो सोचा ही नहीं था। न कभी मेम साहब ने ही यह सोचा। बाई असमंजस में पड़ गयी। प्रोफेसर तनिक घरेलू तकाजे से देखते हुए सोचने लगे, बाई खुद तीन घरों में काम करती है, उसे छोड़ कर दिन भर बच्चों को संभाले यह तो उससे कहना तक भद्दा लगेगा और फिर यह उसकी दक्षता का सरासर दुरुपयोग ही होगा। मगर इंतजाम करेगी तो बाई ही करेगी उन दोनों से तो कुछ होने से रहा। इधर असमंजस में पड़ी बाई का चेहरा फिक्रमंद होता चला गया।

कि प्रोफेसर को अचानक एक रास्ता सूझा। उन्होंने उतावलेपन से पूछा, "तुम्हारी मुन्नी कितने साल की है?"

"दस-ग्यारह की होगी।" बाई को लगा कि किनारा मिल गया और फिर एकदम बोली, "मगर वो तो स्कूल जाती है।" सुनकर प्रोफेसर एक झटके से उलझन में पड़ गए। होंठ की कोर से दाँत दबा कर तरकीब सोचने लगे। आखिर उन्होंने पूछा, "किस क्लास में पढ़ती है?"

"पाँचवें दरजे में।"

वे कुछ कहने को हुए, कहते-कहते रुके। फिर कहने को हुए और फिर रुके। उन्हें कुछ नहीं सूझा तो जाते-जाते सारा बोझ बाई पर डालते हुए कह गए, "मैं कुछ नहीं जानता। इन बच्चों की देखरेख का इंतजाम कर पाओ तो ठीक, नहीं तो सुधा से कह दो कि पढ़ाने न जाए।"

प्रोफेसर की बात में बाई ने निराला अपनत्व अनुभव किया, वह मान से भर उठी। आंगन को वह बड़े लाड़ से रगड़-रगड़ कर धोने लगी। उसने घड़े का नहीं, सुराही का पानी पिया। इससे पहले सुराही को वह सिर्फ़ भरती आयी है। उसने सुराही की गरदन साधिकार पकड़ी और गिलास में पानी निकाला। उसने ऐसा दो बार किया। दूसरी बार के आधा गिलास पानी से उसने कुल्ले किए और गिलास मांजकर घर चली गई।

प्रोफेसर लॉन में बैठे तब तक अपनी बात का छोर पकड़ चुके थे।

मुन्नी के गाल आँसुओं से तर हो गए। कोठरी के एक कोने में कनस्तरों के बीच वह

आड़ी-तिरछी जा पड़ी। उसकी माँ ने कई बार उसे टेहुनी पकड़ कर उठाना चाहा मगर वह हुमसी तक नहीं। वह अब स्कूल नहीं जाएगी, यह सोच-सोच कर उसे इतना रोना आया कि बाई सहम-सी गई। उसने जानते-बूझते कि उसकी बच्ची स्कूल के लिए इतना हीड़ेगी, ऐसा किया। उसे ग्लानि हो रही थी मगर वह मजबूर थी। वे लोग भले हैं कुछ कहते नहीं हैं मगर उनके गैरिज में रहें हम और उन पर मुश्किल पड़े तो हमीं मुँह फेर लें। आखिर वे लोग किसके पास जाएँ! उन दोनों बच्चों को कौन संभालेगा! वह कौन-सा मुँह लेकर जाएगी उन लोगों से कहने कि उससे कुछ नहीं हुआ। मेम साहब के जाने का समय हो रहा है और यह लड़की है कि रोए जा रही है।

बाई ने दरवाजे से झाँक कर धूप देखी और बोली, "चल उठ मुन्नी, टेम हो गया।"

उठना तो दूर, मुन्नी हिली तक नहीं, न कुछ बोली ही। जब मनाए-मनाए वह नहीं उठी तो बाई ने उसकी टेहुनी पकड़ी और उसे जोर से खींचा। दो खाली कनस्तरों के साथ वह जमीन पर घिसटती गयी मगर उसने जमीन नहीं छोड़ी। बाई को गुस्सा आ गया। दो-चार नीचट हाथ जमाते हुए उसने उसे घसीट कर कमरे के बीचो-बीच डाल दिया और चिल्लाई, "उठ हरामजादी, उठती है कि नहीं?" मुन्नी सहम गयी। धीरे-धीरे उठी दरवाजे की तरफ बढ़ चली। बाई उसके पीछे-पीछे बाहर निकल गयी। साँकल चढ़ाते हुए बोली, "बंद कर अब रोना और चल सीधी।"

बाई को अपनी सख्ती अच्छी नहीं लगी। उसका मन भीतर से न जाने कैसा हो गया। धूप उसे बहुत तेज लगी और वह चिरपरिचित कालोनी एकदम परायी-सी। उसे क्षण भर को ऐसा लगा, न जाने कौन उसकी मुन्नी को लिए जा रही है, न जाने यह कौन-सी जगह है और न जाने वह कहाँ से कब से यह सब देख रही है।

मेम साहब गेट तक निकल आयी थीं। उन दोनों को देखकर उल्टे पाँव लौट पड़ीं। उन्होंने घड़ी देखी और राहत की सांस ली। पहले ही दिन लेट होना पड़ेगा यह सोच कर वे बहुत उद्विग्न हो गयी थीं। दोनों बच्चों के खिलौने, कपड़े और खाने-पीने की चीजें उन्होंने सुबह से ही सजाकर रख दी थीं। बच्चों को खिला-पिला दिया था और तीन-चार बार उन्हें चूम भी चुकी थीं। प्रोफेसर यह सब बड़े ही स्नेह से देखते मुस्कराते रहे थे। बाई और मुन्नी को देख कर भी वे वैसे ही मुस्कराए। मेम साहब ने मुन्नी को गौर से देखा, सब चीजों के बारे में जल्दी-जल्दी बताया और दरवाजे बंद रखने की ताकीद देकर 'चलो' कहती हुई प्रोफेसर के साथ चल दीं।

पीछे-पीछे बाई भी बाहर निकल गयी। वह उन दोनों को स्कूटर पर जाता देखती रही। उसे अकारण घबराहट-सी होने लगी। मुन्नी के पास जाने को उसके पाँव अपने-आप मुड़ गए मगर फिर उसने पाया कि वह सीधी चली गयी।

शाम को बाई घर लौटी तब तक मुन्नी आ चुकी थी। दोनों पैर पसार कर अपना बस्ता खोले चीजें नबेर रही थी। गरदन झुकाए एकदम मगन। देखकर बाई की हिम्मत घर में घुसने की नहीं हुई। वह धीरे से सरक कर पड़ोस में चली गयी। मगर उसका वहाँ मन नहीं लगा। जल्दी ही लौट आयी। मुन्नी बस्ता जमा चुकी थी। और ऐड़ियाँ उठाए खूंटे पर टाँग रही थी।

दूसरे दिन वह जाते-जाते मुन्नी से कह गयी, "धूप चबूतरे पर आते ही चली जाना।"

मुन्नी हमेशा चबूतरे पर धूप देखकर ही जाती रही है। धूप ने चबूतरा छुआ कि मुन्नी ने खूंटे से बस्ता उतारा। वह गुनगुनाती बुद-बुदाती हुई बाहर निकली। एड़ियाँ उठा कर साँकल चढ़ाते-चढ़ाते उसे याद हो आया तो भीतर जाकर पाँच-पाँच के तीन सिक्कों से भरी एक छोटी-सी डिब्बी उठाकर उसने बस्ते में डाल ली। दरवाजा बंद किया और चल दी।

स्कूल के रास्ते में प्रोफेसर के घर के आगे जब वह पहुँची तो मेम साब गेट पर खड़ी दिखीं। उन्होंने हैरानी से मुन्नी को देखा और आवाज दी। मुन्नी पक्षियों की तरह चौंक गयी। जैसे सपने से तीखी धूप में जागी हो। हड़बड़ा के जहाँ के तहाँ रुकी रह गयी और बस्ते को हाथ से मुचड़ने लगी।

"खड़ी क्यों रह गई? आओ न!" मेम साहब ने झुंझला कर कहा। वह सहमी चाल से उनके पास पहुँची। उन्होंने गेट खोलकर उसे अंदर किया और अपने साथ भीतर ले गयी। प्रोफेसर ने देखा कि वह बस्ता टांगे है। वे हँसकर बोले, "अच्छा! बस्ता भी लाई है!" तो मेम साहब ने विचित्र-सी आवाज में कहा, "यह तो स्कूल जा रही थी।"

प्रोफेसर ने मुन्नी की ओर मुस्कराते हुए देखा और बोले, "भूल गई होगी। इतने दिनों की आदत जो है। क्यों बेटे है न!"

मुन्नी ने डरी-डरी आँखों से उन्हें देखा और धीरे-धीरे चलती हुई बच्चों के कमरे में चली गयी।

शाम को बाई घर लौटी तो मुन्नी दूसरी ओर करवट लिए पड़ी थी। बाई ने उसे पुकारा मगर वह चुप ही पड़ी रही। कंधों पर हाथ रखकर मुलायमियत से खींचा तो खिंची नहीं। झाँक कर देखा, अरे! यह तो बुरी तरह रो रही है।

"क्यों रो रही हो? मुन्नी क्या बात है है बेटी?"

मुन्नी चुप।

बाई ने उसके सिर पर हाथ फेरा, पुचकारा और भीगी आवाज में बोली, "रोते नहीं हैं मुन्नी, बताओ क्या बात है?"

मुन्नी लगभग चिल्ला पड़ी। "उनके बच्चों ने हमारी सारी किताबें फाड़ डालीं।" फिर एक झटके से उठी और बस्ता पटकती हुई बोली, "देखो।"

बाई ने बस्ता उलट दिया। सारी किताबें चिन्दी-चिन्दी। मुन्नी को बाई ने कातर होकर देखा। और खोयी-खोयी-सी आवाज में बोली, "मगर तुम बस्ता ले क्यों गयी थीं?" पूछते-पूछते उसका गला रुंध गया।

मुन्नी कुछ न बोली। रोती रही।

चबूतरे पर शाम का घिरता अंधेरा था। अंधेरे में एक कुत्ता कान खड़े किए बैठा था। उसकी आंखें झपक रही थीं। और वह सुन रहा था कि मुन्नी रोए चली जा रही है।

'साक्षात्कार, नवम्बर-दिसम्बर 1983 से साभार

प्रश्नों के नमूने

होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत परीक्षा में बच्चों की जिज्ञासा, तर्कशक्ति, कल्पना शक्ति, उपलब्ध जानकारी की विश्लेषण क्षमता आदि गुणों की जांच की जाती है। इसके लिए प्रश्न ऐसे बनाये जाते हैं, जो इन गुणों की जाँच कर सकें। जाहिर है ये प्रश्न परम्परागत ढंग के प्रश्नों से अलग होते हैं। हम प्रत्येक अंक में प्रश्नों के कुछ नमूने छापेंगे जिससे शिक्षकों को अंदाज हो कि किस प्रकार के प्रश्न उन्हें बनाना हैं।

भोजन एवं पाचन

1. (क) मोहन को उसके गुरुजी ने एक परख नली में कोई घोल दिया और पूछा कि इसमें मंड है या नहीं। मोहन मंड की जाँच कैसे कर सकता है?

(ख) मोहन के प्रयोग शुरू करने के एक घंटा पहले उसके छोटे भाई ने आकर परख-नली में थूक दिया। इससे मोहन के प्रयोग में क्या अंतर पड़ेगा, कारण सहित बताओ।

2. अनिल को एक सफेद चूर्ण एक कागज की पुड़िया में दिया गया। उसने थोड़ा-सा चूर्ण एक परख नली में लिया। इसीमें का थोड़ा चूर्ण प्लेट पर रखा और शेष पुड़िया में रहने दिया।

अब आयोडीन की दो-दो बूंदें उसने इन तीनों स्थान पर रखे चूर्ण पर डाली जिसका परिणाम इस प्रकार रहा–

परख नली का चूर्ण सफेद रहा।

प्लेट का चूर्ण सफेद रहा।

कागज का चूर्ण कुछ काला-सा प्रतीत हुआ।

अब उसने अपने साथियों से पूछा तो राकेश ने कहा–

(1) सफेद चूर्ण में मंड है। महेश ने कहा–(2) कागज और चूर्ण दोनों में मंड है। सुरेश ने कहा–(3) कागज में मंड है। बृजेश ने कहा–(4) कागज और चूर्ण दोनों में मंड नहीं है।

आपने राकेश, सुरेश, महेश और बृजेश के उत्तर सुने। अब विचार कीजिए और सोचकर बताइये कि इनमें सही उत्तर किसने दिया।

क्या तुमने कभी कागज पर आयोडीन गिर जाने से कोई परिवर्तन देखा है? बताओ कि वह क्या है?

पृथक्करण

1. नीचे बनी तालिका में चार पदार्थों के बारे में कुछ जानकारी दी है। इस जानकारी के आधार पर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दो–

पदार्थ का नाम	जल में घुलता है या नहीं	जल में तैरता है या नहीं	चुंबकीय है या नहीं
1. लोहे की छीलन	नहीं	नहीं	हां
2. तांबे की छीलन	नहीं	नहीं	नहीं
3. लकड़ी का बुरादा	नहीं	हां	नहीं
4. शक्कर	हां	नहीं	नहीं

(क) प्रथम दो पदार्थों के मिश्रण में से प्रत्येक को अलग-अलग कैसे करोगे?

(ख) अंतिम दो पदार्थों के मिश्रण में से प्रत्येक को अलग-अलग कैसे करोगे?

(ग) चारों पदार्थों के मिश्रण में से प्रत्येक को अलग-अलग कैसे करोगे?

दशमलव-गणित

1. (क) तीन बर्तनों का वजन क्रमशः 1.05, 1.5, 1.10 किलोग्राम है। इन्हीं बर्तनों का वजन ग्राम में लिखो?

(ख) 1 घंटे और 30 मिनट को दशमलव प्रणाली से घंटों में लिखो?

(ग) .25 घंटे को मिनट बनाकर लिखो।

2. (*i*) 1.5 और 1.05 में कौन-सी संख्या बड़ी है?

(*ii*) $0.1 \times 0.1 = \ldots\ldots$

(*iii*) .01 और .1 में क्या कोई अन्तर है?

3. (1) 100 पन्नों की एक पुस्तक की मोटाई 1 से.मी. है। पुस्तक के एक पन्ने की मोटाई कितने से.मी. होगी। दशमलव में लिखिए।

(2) 2.6538 को दशमलव के पहले स्थान तक सन्निकटन कर लिखिए।

(3) विनोद के पास दो मीटर लंबा तार था। उसमें से उसने 16 से.मी. तार मोहन को दे दिया। विनोद के पास बचे हुए तार की लंबाई मीटर की इकाई में लिखिए।

(4) एक फुट नौ इंच को दशमलव के दूसरे स्थान तक फुट की इकाई में लिखिए।

सामान्य

1. एक कक्षा के विद्यार्थियों के पास कुछ कंचे थे। राम ने हर एक विद्यार्थी के कंचों को गिना और चित्र में दिया स्तंभालेख बनाया।

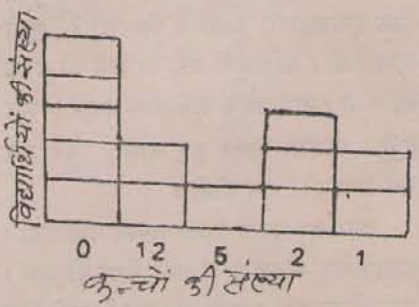

(क) इस स्तंभा लेख के क्रम में जो गलती है उसे सुधार कर रेखाचित्र पर स्तंभालेख क्रमानुसार दुबारा बनाओ।
विद्यार्थियों की संख्या कन्चों की संख्या

(ख) इस स्तंभालेख का बहुसम्मत मान क्या है?

(ग) कक्षा में कुल मिलाकर कितने विद्यार्थी थे?

(घ) इस स्तंभालेख से कंचों की प्रति विद्यार्थी औसत संख्या दशमलव के दो अंकों तक निकालो।

(च) एक विद्यार्थी ने जिसके पास 12 कंचे थे; अपने 6 कंचे उस विद्यार्थी को दे दिए जिसके पास 2 कंचे थे। ऐसा करने से स्तंभालेख में परिवर्तन आयेगा। इस नई स्थिति को रेखा-चित्र पर नया स्तंभालेख बनाकर दिखाओ।

अब औसत क्या होगा ?

5. निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में दो।

(क) तांबे के तार पर चढ़ी परत को प्रयोग के पहले घिसना क्यों आवश्यक है ?

(ख) परखनलियों को प्रयोग करने के बाद धोना क्यों जरूरी है ?

(ग) टार्च में लगी स्प्रिंग का क्या उपयोग है ?

(घ) बिजली के तारों, विद्युत बटनों में प्लास्टिक क्यों चढ़ा रहता है ?

6. नीचे दिए हुए वाक्यों में से कुछ वाक्य सही हैं और कुछ गलत। जो वाक्य सही हैं उन पर (√) का निशान लगाओ। जो वाक्य गलत है उन पर × का निशान लगाओ और उनके नीचे दी गई जगह में उन्हें सुधार कर लिखो।

(1) 4.547 कि.मी. को दशमलव के पहले स्थान तक सन्निकटन द्वारा 4.6 कि.मी. लिखा जा सकता है।

(2) अंधेरे कमरे में उगाया गया पौधा हमेशा पूर्व दिशा की ओर ही झुकेगा।

(3) प्रश्वासित हवा चूने के पानी को दूधिया कर देती है।

सन्निकटन

1. एक बड़ी गोशाला में 22 गायें हैं। इन गायों का एक दिन का दूध का उत्पादन निम्नलिखित तालिका में दिया गया है।

गाय क्रमांक	दूध की मात्रा (लीटर)
1	12
2	17
3	13
4	18
5	12
6	13
7	13
8	13
9	19
10	18
11	12
12	13
13	17
14	13
15	13

(क) गायों के एक दिन के उत्पादन को स्तम्भालेख द्वारा दिखाओ।

(ख) गायों के एक दिन के दूध के उत्पादन का बहुसम्मत मान क्या है ?

बहु सम्मत मान.....

(ग) गोशाला में दूध का प्रति गाय औसत उत्पादन क्या है ?

औसत उत्पादन.....

(घ) दूध के औसत उत्पादन को सन्निकटन विधि द्वारा पूरे लीटर में दिखाओ।

औसत उत्पादन (सन्निकटन द्वारा).....

(पृष्ठ 6 का शेष)

विश्वास बच्चे हमेशा के लिए खो बैठते हैं। धीरे-धीरे यह सहज प्रवृत्ति; यह सहज क्षमता मिटने लगती है और बच्चों को ख्याल भी नहीं रहता कि कभी उनमें यह क्षमता थी। कितना सामान्य अनुभव है ये–कि जब कोई छात्र अपनी उत्तरों की पुस्तिका मुझे दिखाने लाता

है–और पूछता है–"सर–ठीक है न ?" और मैं उससे पूछ डालता हूँ–"तुम्हें क्या लगता है"–तो फटी-फटी आँखों से देखने लगता है। जैसे मैंने कैसी अजीब, कैसी अनहोनी सी बात कर दी है। "तुम्हें क्या लगता है ?" उन्हें क्या लग सकता है ? सही है या गलत यह तो शिक्षक बताएगा। क्या सही है, क्या गलत–इसका उनके कुछ सोचने या कुछ लगने से क्या वास्ता भला ? सिर्फ बच्चे ही नहीं–बड़ी उम्र के छात्र भी–ऐसा ही महसूस करते हैं। वे भी अपने काम के बारे में अपनी कोई राय; अपना कोई मूल्यांकन देने में बिल्कुल अक्षम है। और पूरी तरह से शिक्षक की सराहना, शिक्षक की आलोचना, शिक्षक के आकलन पर निर्भर–दयनीयता की हद तक निर्भर।

गणित परियोजना

–ए. जी. टिकलकर

शासकीय बहुउद्देशीय उच्चतर माध्यमिक शाला हरदा में गणित के अध्यापक श्री टिकलकर जी ने छात्रों की गणित में कमजोरी दूर करने के लिये एक विशेष प्रयास किया। पहले उन्होंने पता किया कि सामान्यतः छात्र कौन-कौन सी गल्तियाँ करते हैं। कमजोरियाँ पता कर लेने के बाद उन्हें दूर करने की कोशिश की। इसी प्रयास का विवरण यहाँ प्रस्तुत है।

गत कई वर्षों का मेरा अनुभव रहा है कि ग्यारहवीं कक्षा का सामान्य स्तर का छात्र गणित के प्रश्न करने की विधि प्रायः जानता है; परन्तु गणित की मूलभूत धारणाएँ स्पष्ट न होने से प्रश्न हल करते समय वह बीच में गलती करता है और पूरे अंक प्राप्त नहीं कर पाता है।

मूलभूत धारणाएँ स्पष्ट न होने के कारणों का विश्लेषण किया जाए तो प्रमुख रूप से निम्न बिन्दु सामने आते हैं।

(*i*) छात्र कक्षा में पढ़ाई की ओर ध्यान नहीं देता अथवा बार-बार अनुपस्थित रहता है।

(*ii*) छात्र दिया गया गृह-कार्य स्वयं नहीं करता, किसी अच्छे छात्र की कॉपी में से केवल नकल कर लेता है।

(*iii*) एक सिद्धान्त समझाने के पश्चात् उस पर आधारित सवाल कक्षा में ही छात्रों द्वारा करवाए जाना चाहिए। परन्तु सामान्यतया यह नहीं होता है।

(*iv*) कुछ शिक्षक इस प्रकार कक्षा में ही अभ्यास करवाते हैं; किन्तु कक्षा में छात्र संख्या अधिक होने से प्रत्येक छात्र की ओर व्यक्तिगत ध्यान देना संभव नहीं होता है।

(*v*) उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में पाठ्यक्रम अधिक रहता है। साथ ही शाला में विभिन्न (शाला की और समाज की) गति-विधियाँ भी अधिक रहती हैं। जैसे विज्ञान मेला, खेलकूद आदि। अतः पाठ्यक्रम पूरा करने के लिए जितने कालखण्ड आवश्यक होते हैं, उतने मिल नहीं पाते।

इन सब कारणों से छात्र की कमजोरियाँ कम तो होती नहीं है बढ़ती ही जाती हैं।

पिछले वर्ष हमारे प्राचार्य ने छात्रों के लिए कोई उपयोगी परियोजना आरंभ करने के लिए मुझसे कहा। उस समय मेरे मन में विचार आया कि सामान्य स्तर के छात्र गणित के प्रश्न हल करते समय प्रायः जो गल्तियाँ कर सकते हैं उनको अनुभव के आधार पर, संकलित कर एक परियोजना आरंभ की जा सकती है। मैं इस कार्य में जुट गया और परियोजना को कार्यान्वित किया। इस परियोजना के प्रमुख उद्देश्य निम्नानुसार थे—

(*i*) छात्रों को गणित की मूलभूत धारणाएँ स्पष्ट करना।

(*ii*) छात्रों में गणित विषय में रुचि एवं आत्मविश्वास उत्पन्न करना।

(*iii*) परोक्ष रूप से शाला का बोर्ड परीक्षाफल का प्रतिशत सुधारना।

मैंने ऐसे कई छोटे-छोटे उदाहरण छाँटे जिनमें छात्र संभवतः गलती कर सकते हैं और एक घंटा समयावधि का एक प्रश्न पत्र तैयार करके छपवाया। ग्यारहवीं कक्षा के लगभग 200 छात्रों को यह प्रश्न पत्र देकर उनकी परीक्षा ली गई। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर प्रश्न पत्र में ही लिखना था। प्रश्नोत्तर पुस्तिकाओं को जाँचने से छात्रों द्वारा की गई जो त्रुटियाँ पाई गईं उनमें से कुछ निम्नानुसार हैं;

(*i*) $(-a-b)^2$ का सरल रूप अधिकांश छात्रों ने $a^2-2ab+b^2$ लिखा। कुछ छात्रों ने (—) उभयनिष्ठ निकाल कर—$(a^2+2ab+b^2)$ लिखा। दोनों ही उत्तर गलत है।

स्पष्ट है कि छात्र जानता है कि

$$(a+b)^2 = a^2+2ab+b^2$$
$$(a-b)^2 = a^2-2ab+b^2$$

परन्तु सवाल थोड़ा परिवर्तित रूप में सामने आने पर वह गड़बड़ा गया।

(2) $16-(-2)^4$ को अनेक छात्रों ने निम्नानुसार सरल किया :

$$16-(-2)^4$$
$$=16+2^4$$
$$=16+16$$
$$=32$$

छात्रों ने (—) और (—) का गुणा पहले किया जो कि गलत है। उन्हें पहले $(-2)^4$ को सरल करना था और उत्तर $16-16=0$ लाना था।

(3) $\sqrt{25+16}$ को छात्रों ने इस प्रकार सरल किया :

$$\sqrt{25+16}=5+4=9$$

स्पष्ट है उन्होंने 25 और 16 का वर्गमूल पहले निकालकर बाद में उन्ह जोड़ा जबकि 25 और 16 को पहले जोड़ना था।

(4) $(x^4)^3$ को छात्रों ने सरल रूप x^7 दिया। छात्र प्रायः $x^4\times x^3$ और $(x^4)^3$ को सरल करते समय असमंजस्य में पड़ते हैं। घातों का योग कब करना और गुणा कब करना इसकी स्पष्ट कल्पना छात्रों को नहीं है।

(5) छात्रों ने $2^\circ\times 3^\circ=6$ लिखा। छात्र प्रायः जानते हैं कि $0^\circ=1$ परन्तु किसी भी संख्या का घात शून्य होने पर उसका मान 1 हो जाता है इसकी शायद उन्हें कल्पना नहीं है।

(6) $2(3\times4)$ को कुछ छात्रों ने $6+8=14$ लिखा। छात्रों को $2(3+4)$ और $2(3\times4)$ में अन्तर होने का ज्ञान नहीं है।

(7) निम्नांकित दो समीकरणों को कई छात्रों ने इस प्रकार हल किया;

$14+x=14$ $\qquad$ $7x=7$

या, $x=\frac{14}{14}$ $\qquad$ या, $x=7-7$

$\checkmark$ $x=1$ $\qquad$ $\times$ $x=0$

इन छात्रों को पक्षान्तर कब करना और भाग कब देना इसका स्पष्ट ज्ञान नहीं है।

(8) $Sin\ 30 = Sin\ \frac{1}{2}$ को कुछ छात्रों ने सत्य बतलाया। त्रिकोणमितीय अनुपात किसी कोण का ही होता है। $Sin\ 30^\circ$ का मान $\frac{1}{2}$ है, न कि केवल 30° का। परन्तु छात्रों की इस सम्बन्ध में धारणाएँ भ्रामक हैं।

(9) $-\frac{2x-6}{2}$ को कई छात्रों ने $-\frac{2x}{6}-\frac{6}{2}=-x-3$ लिखा। छात्रों ने $(-)$ का गुणा $2x$ में किया परन्तु -6 में नहीं किया।

(10) 576 वर्ग इंच को वर्ग फुट में बदलने के लिए छात्रों ने 576 में 12 का भाग देकर उत्तर 48 वर्ग फुट लाया। जो कि गलत है। यथार्थ में 144 का भाग देना था। इसी प्रकार घन मीटर को घन सेमी. में कैसे बदलना इसका भी ज्ञान छात्रों को नहीं होगा।

(11) यदि $2Sin\frac{A}{2}=1$, तो कई छात्रों ने $Sin\ A$ का मान 1 लिखा। स्पष्ट है कि उन्होंने सवाल को निम्नानुसार हल किया।

$$2\ Sin\frac{A}{2}=1\ \therefore\ Sin\ A=1$$

अथवा

$$2\ Sin\frac{A}{2}=1\ \therefore\ Sin\ \frac{A}{2}=\frac{1}{2}$$

$$\therefore\ Sin\ A=1$$

(12) कुछ छात्रों ने $\frac{8+x}{4}$ को सरल कर $2+x$ लिखा। स्पष्ट है कि उन्होंने 8 में 4 का भाग दे दिया। यह क्रिया यहाँ क्यों गलत है उन्हें ज्ञान नहीं है।

प्रश्नोत्तर पुस्तिकाएँ जाँचने के पश्चात् यह भी मालूम किया गया कि सही सवाल करने वालों का प्रतिशत कितना है? यह इस प्रकार किया गया। मान लो कुल प्रश्न 25 है और छात्र संख्या 200 है। याने कुल 5000 हुए। इनमें से कितने सही हुए ज्ञात कर तदनुसार प्रतिशत निकाला गया यह केवल 18% प्राप्त हुआ।

इसके बाद अनुवर्ती प्रयास (Follow up action) किया गया। दो माह तक मैं ग्यारहवीं कक्षा के विभिन्न कालखण्डों में गया (कोई शिक्षक अवकाश पर रहने पर उसके कालखण्डों में) और छात्रों को उनकी गलतियाँ समझाई। प्रश्न पत्र का प्रत्येक प्रश्न श्याम पट पर हल किया गया। छात्र जहाँ गलती करते हैं उस बिन्दु को विशेष जोर देकर समझाया। प्रश्न के अन्य परिवर्ती रूप भी स्पष्ट किए।

अब एक दूसरा प्रश्न पत्र तैयार कर इन्हीं छात्रों की पुनः परीक्षा ली गई। परिणाम आंशिक रूप से संतोषजनक रहा। सही करने वालों का प्रतिशत 42% प्राप्त हुआ।

यदि इस परियोजना से छात्रों के आत्म-विश्वास में थोड़ी भी वृद्धि हुई हो, तो मैं इस परियोजना को सफल समझूँगा।

—व्याख्याता
शा. बहु. उ.मा. वि., हरदा (म.प्र.)

प्राथमिक शाला के बच्चों का गणित

प्रायमरी स्कूल के बच्चे गणित विषय में कितना जानते हैं, उन्हें गणित की बुनियादी बातें कितनी आती हैं यह परखने के लिए उन्हें गणित के कुछ प्रश्न दिए गए। अधिकांश बच्चों की बुनियाद बहुत कमजोर पाई गई। जब वही सवाल प्रायमरी और मिडिल के 40 शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों को दिए गए। यहाँ भी हालात बेहतर नहीं थे। जब शिक्षकों की ही गणित की बुनियाद कमजोर होगी तो आगे बच्चों की बुनियाद कैसे पक्की हो सकती है?

हम जब भी शिक्षा में परिवर्तन की बात कहते हैं तो सामान्यतः पाठ्यक्रम को बोझिल बनाने, पुस्तकों को मोटी करने या विषयों की संख्या बढ़ाने के साथ-साथ शिक्षकों को विशेष प्रशिक्षण तक आकर रुक जाते हैं। हमारा अनुभव इससे कुछ अलग रहा है। प्राथमिक शिक्षा का आधार श्री आर रहा है अर्थात लिखना, पढ़ना और गणित। हमने सामान्य विज्ञान, सामाजिक अध्ययन व अन्य भाषाओं को पाठ्यक्रम में डाल दिया। नतीजे के रूप में न खुदा ही मिला न बिसाले सनम, न इधर के रहे; न उधर के रहे। आज के प्राथमिक पास बच्चे न तो ठीक से पढ़ पाते हैं न लिख पाते हैं और गणित तो बस माशा अल्लाह।

हाट पीपल्या (देवास) और पीपलिया मंडी (मन्दसौर) के लगभग 150 विद्यार्थियों (आधे बालक और आधी बालिकाएँ लेकर) कक्षा छठवीं में हमने गणित के कुछ लघु प्रश्न देकर यह जानने की कोशिश की है कि उन्हें गणित की बुनियादी समझ क्या है? परीक्षण हेतु लिये गये छात्र-छात्राएँ प्राथमिक पाँचवीं

तक पढ़े हैं, जिला स्तरीय प्राथमिक परीक्षा में उत्तीर्ण होकर प्रमाण-पत्र प्राप्त कर चुके हैं। प्राप्त परिणाम अपने आप में चौंकाने वाले एवं प्रश्न खड़ा करने वाले हैं। बात केवल दो विशेष स्थानों और चार पाँच स्कूलों की ही नहीं है, हम अनुवर्तन के समय बच्चों से जहाँ भी चर्चा करते हैं गणित की बुनियादी समझ में यही हाल दिखाई दिये हैं। परीक्षा प्रश्न इस प्रकार के थे, आप स्वयं भी इन्हें आजमा सकते हैं।

पहला प्रश्न था---अंकों में लिखो---

(अ) एक हजार तीन सौ एक।

(ब) दो हजार पाँच।

(अ) खण्ड के उत्तर में 60 से 70% बच्चों ने इस प्रकार लिखा था 1000, 300, 1 कुछ ने तो 100003001 भी लिखा था।

(ब) खण्ड के अधिकांश उत्तर थे 20005 और 2000005 अथवा 2,5

उपरोक्त उत्तरों से साफ जाहिर होता है कि बच्चों में स्थानीयमान वाली अवधारणा नहीं है। वैसे स्थानीय मान 2री और 3री कक्षा के पाठ्यक्रम में हैं।

दूसरा प्रश्न था---0.09 और 0.1 में कौन सी संख्या बड़ी है। इक्के-दुक्के बच्चों को छोड़ सभी ने 0.09 को ही बड़ी संख्या बताया।

तीसरा प्रश्न था---गुणा करने का 0.1×0.1 का गुणा।

अधिकांश बच्चों ने इसका उत्तर 0.1 लिखा या फिर .2, .02, 0.11, 1.0, 0.0, 000.1, 11.21.100.2, 2,.3 इत्यादि।

एक बालक ने तो गुणा इस प्रकार किया--

```
   0.1
  ×0.1
 ------
   001
  ...--
 ------
 000.1   उत्तर.
```

चौथा प्रश्न---1/100 को दशमलव में परिवर्तित करना था। अधिकांश बच्चों ने इसका उत्तर लिखा ही नहीं। जिन्होंने लिखा उनके उत्तर इस प्रकार थे---1.00,1.100, 10100, 1.100

पाँचवाँ प्रश्न---505 को 5 से भाग देकर भागफल व शेष लिखना था। एक दो छात्रों ने ठीक किया। अधिक संख्या भागफल 10 और शेष 3 बताने वाली थी परन्तु फिर भी उत्तरों की विविधता इस प्रकार थी---

भागफल–	1.6	1.0	125	16	1006	2/10	104	8
शेष---	2	3	3	0	–	–	–	3
भागफल	1	3	16	17	108	2510	1.7	101
शेष–	03	15	–	2	2	–	2	–
भागफल–	10	1	3135	101	106	1.6	6	1281
शेष–	5	3	3032	–	–		–	–

एक गड़बड़ लगभग सभी छात्रों ने की थी वह अंकों को लिखने की। छात्र हिन्दी तथा अंग्रेजी अंकों का प्रयोग साथ-साथ करते पाये गये। इसका कारण हो सकता है कि पांचवीं कक्षा तक वे हिन्दी अंकों में लिखते रहे हैं। छठवीं कक्षा में अंग्रेजी अंकों का ही प्रयोग होता है।

स्कूली शिक्षा की इस हालत के लिए कौन जिम्मेदार है? क्या बालक, शिक्षक, शिक्षातंत्र या कोई और कारक?

इसी प्रकार यही परीक्षण प्राथमिक एव माध्यमिक शालाओं के 40 शिक्षक प्रशिक्षार्थियों के साथ किया गया। जिनमें 50% ने गुणा के तथा 10% ने भाग के प्रश्न ठीक किये। यह परिणाम तो हमें और भी गहराई से सोचने के लिए बाध्य करते हैं। यदि हमारे प्राथमिक शाला शिक्षक का गणित का आधार ही इतना कमजोर है तो शिक्षक प्रशिक्षण में शिक्षण विधियों के साथ-साथ विषय वस्तु पर भी अधिक ध्यान देना होगा। प्राथमिक शाला शिक्षक का गणित का ज्ञान कम है, अतः प्राथमिक शाला के छात्र भी कमजोर रह जाते हैं, जब ये छात्र हायर सेकण्डरी पास करके शिक्षक बन जाते हैं तो इनका गणित का आधार कमजोर रह जाता है। इस प्रकार यह कुचक्र चलता रहता है। अब यह समझने की आवश्यकता है कि इस कुचक्र को किस स्तर पर तोड़ा जाये, क्या शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं से या प्राथमिक शाला के शिक्षण से या किसी अन्य स्तर से, या सभी स्तर पर एक साथ? इन सब प्रश्नों का उत्तर किनसे पूछें? क्या शिक्षा विभाग शिक्षा के सतही सुधार से हटकर गहराई से सोचेगा?

यदि शिक्षा भवन की नींव इतनी कमजोर है, तो कलश की भव्यता की सार्थकता क्या है?

---डॉ. रामनारायण स्याग, यतीश कानूनगो
एकलव्य, देवास.

अभिलाषा

बच्चों ने कहा
हम फूल नहीं बनेंगे
लोग मसलेंगे, कुचलेंगे
इसलिए
हम शूल बनेंगे
हर गलत
कदम उठाने वाले के
पाँव में जाकर चुभेंगे।

–अशोक बाजपेयी
शास. उच्च. माध्य. शाला, हरदा

बाल केन्द्रित पाठ्यक्रम कैसा ?

होशंगाबाद विज्ञान अंक 15 में "भाषा व भाषा शिक्षण कुछ विचार" (अंक-15) पर छपी प्रतिक्रियाओं को पढ़कर हमें बहुत खुशी हुई और हमारी हिम्मत बढ़ी। हम कृष्णकुमार, दीनानाथ शर्मा तथा राजेश श्रीवास्तव के आभारी हैं कि उन्होंने भाषा और भाषा शिक्षण के संदर्भ में कई महत्वपूर्ण प्रश्न उठाये हैं। हमारा एक उद्देश्य था कि हम भाषा के मुद्दे पर एक बहस जारी कर सकें—कम से कम उसमें हम काफी सफल रहे हैं। आशा है भविष्य में भी पाठक हमें अपनी प्रतिक्रियायें भेजते रहेंगे। आपस में बातचीत करने से ही धारणाएँ सुलझती हैं और कार्यक्रम आगे बढ़ते हैं।

इस बात में कोई दो राय नहीं है कि भाषा मुक्ति और विकास का साधन है। यह भी हमें मान्य है कि बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रम एवं भाषा संबंधी कौशलों का विकास बहुत बुनियादी प्रश्न है। लेकिन हम यह मानने को तैयार नहीं कि ये प्रश्न भाषा सीखने की प्रक्रियाओं, भाषा संरचना, बच्चे के संज्ञानात्मक विकास, बच्चे को पढ़ने-पढ़ाने की परिस्थिति, और बोली में रिश्ते, भाषा के मानकीकरण आदि प्रश्नों से एक गहरे रूप से जुड़े नहीं हैं। हम तो यह मानते हैं कि बाल- केन्द्रित पाठ्यक्रम बनाना एवं भाषाई कौशलों का अर्थपूर्ण ढंग से सिखाना इन प्रश्नों पर विचार किए बिना संभव ही नहीं। जब तक आप यह निश्चय नहीं कर लेते कि बच्चे किन बातों में रुचि लेते हैं, आप बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रम बनायेंगे ही कैसे ?

यदि आपको भाषा सीखने के इस क्रम का ज्ञान हो तो आप अपना पाठ्यक्रम अधिक सार्थक बना सकते हैं। भाषा और बोली का प्रश्न कठिन है—लेकिन क्या हम उससे पूर्णतः बच सकते हैं ? क्या हम यह भूल सकते हैं कि बच्चा जब स्कूल आता है तो उसकी अपनी एक भाषा होती है ? क्या हम यह भूल सकते हैं कि वह भाषा समाज में उसकी अपनी पहचान का एक महत्वपूर्ण आधार है ? क्या यह भूलना उचित होगा कि अध्यापक और मानकीकृत भाषा के पंडित उन बच्चों की भाषा पर व्यर्थ हँसते हैं ? क्या किसी भी भाषा-शिक्षण कार्यक्रम का एक उद्देश्य नहीं होना चाहिए कि बोलियों के प्रति बढ़ती उदासीनता को रोकें और लोगों को यह अहसास करवाएँ कि किसी बोली का मानकीकृत भाषा होना एक सामाजिक एवं ऐतिहासिक संयोग है। यह संयोग, यानी किसी भाषा का मानकीकृत होकर एक बृहद क्षेत्र में फैलना, उस भाषा के किसी गुण पर नहीं वरन् सामाजिक व राजनैतिक परिस्थितियों पर निर्भर है। सभी बोलियाँ भाषाएँ होती हैं–दूसरे शब्दों में भाषा विज्ञान की कसौटी पर एक बराबर होती हैं।

हम दीनानाथ जी की इस बात से सहमत हैं कि किसी भी सामाजिक इकाई की संस्कृति और सभ्यता को समझने के लिए भाषा ही एकमात्र सहारा नहीं है। हमारा तात्पर्य यह था कि भाषा समाज को समझने का एक सशक्त साधन है। सिन्धु घाटी की सभ्यता के बारे में अभी तक कई प्रश्न उलझन बने हुए हैं। हमारा मत है कि इस सभ्यता की भाषा सुलझाने से इन प्रश्नों के सुलझाने में कुछ मदद अवश्य मिलेगी। हम अपने लेख में यह भी कहना चाहते थे कि बच्चा अपने समाज के बारे में अधिकतर ज्ञान अपनी भाषा के माध्यम से ही प्राप्त करता है।

भाषा विज्ञान में यह एक सर्वमान्य बात है कि एक ही स्थान पर रहने वाले लोगों की भाषा में अन्तर होता है। यदि यह अन्तर न हो तो शायद भाषा कभी बदले ही नहीं। और यह अंतर केवल शब्दों तक ही सीमित नहीं। आप अपने गाँव या शहर के किसी व्यक्ति के दो-चार वाक्य सुनकर ही उसकी सामाजिक पहचान के बारे में कई बातें ठीक-ठाक बता देते हैं—उसकी उम्र, लिंग, पेशा, उसकी शिक्षा आदि-आदि। एक ही स्थान पर रहने वाले लोगों के शब्द उच्चारण के ढंग में बहुत अंतर होता है और शब्दों और उनके अर्थों में भी। हाँ, यह शायद सच है कि एक स्थान पर रहने वाले लोगों के वाक्य रचने के ढंग में अधिक अन्तर नहीं होता।

विद्यालय और दफ्तर आदि की भाषा एवं विद्यार्थी की अपनी भाषा की बात करते हुए हमारा आशय था कि हम औपचारिक सरकारी भाषा बनाम सामान्य तौर पर इस्तेमाल की जाने वाली भाषा का सवाल उठायें। हमने यह कभी नहीं कहा जैसा कि शायद दीनानाथजी को लगा कि अखबारों में समाज बदलने वाले विचार रहते हैं। सिर्फ यही कि यदि हम समाज को बदलता हुआ देखना चाहते हैं—एक ऐसी प्रक्रिया शुरू करना चाहते हैं जिसमें सूरते-हालात बदले तो हमारे बच्चों के लिए आवश्यक है कि वे वह भाषा समझें जो दफ्तरों, अखबारों, किताबों आदि में प्रयोग होती है। क्योंकि उसे समझने से ही जानकारी व्यापक रूप में फैलेगी जो कि समाज में व्यापक परिवर्तन के लिए आवश्यक है।

भाषा-विज्ञान के क्षेत्र में उम्र और भाषा को लेकर बहुत वाद-विवाद है। अधिकतर लोग यही मानते हैं कि 13-14 साल की उम्र तक भाषा सीखना बहुत आसान होता है। यह मत धीरे-धीरे बदल रहा है। यह तो सच है कि जहाँ तक बोलने व शब्दों के उच्चारण सीखने का संबंध है बच्चों की बराबरी वयस्क कभी नहीं कर सकते। लेकिन भाषा के शेष क्षेत्रों में शब्दावली जानने व सीखने और वाक्य संरचना सीखने में वयस्क बच्चों से पीछे नहीं।

हम राजेश श्रीवास्तव के विचारों से मोटे तौर से सहमत हैं कि भाषा शिक्षण को बेहतर बनाने में इन बातों का भी महत्व है:–

–रुचिपूर्ण विषय और सरल भाषा में पाठ्य सामग्री।

–अन्य विषयों में हिन्दी पर ध्यान।

–माता-पिता और समाज की भूमिका।

–अन्य भाषाओं से विचारों व सामग्री का आदान-प्रदान।

—रमाकांत अग्निहोत्री

भाषा और विज्ञान

—रमाकान्त,

मैं समझता हूं कि विज्ञान के तौर-तरीकों को समझने के लिए भाषा का सफल उपयोग किया जा सकता है। भाषा की संरचना वैज्ञानिक होती है और हर बच्चे के पास भाषा का भंडार रहता है। वैज्ञानिक विधि को समझने के लिए भाषा भी एक बहुत ही सरल और सहज रूप से उपलब्ध माध्यम है। भाषा के रास्ते से वैज्ञानिक तरीकों को समझाने के लिए हमें किन्हीं विशेष यंत्रों, सामान या प्रयोगशाला की आवश्यकता नहीं पड़ती। हमें सिर्फ संरचना के बारे में सोचना है जो हमारे पास पहले से ही मौजूद है।

विज्ञान एक विधि है जिससे वैज्ञानिक परिकल्पना और नियम बनाते हैं और फिर आस-पास के संसार में उनका परीक्षण करते हैं। वे ऐसे नियम बनाते हैं जिससे आने वाले आंकड़ों के बारे में भी कुछ कहा जा सकता है, यानी यह कहा जा सकता है कि अगर कोई नियम सत्य है तो ऐसा करने पर ऐसा होगा। ये नियम ऐसे नहीं होते जो बदले ही न जा सकें। कोई भी नियम उस समय उपलब्ध या ज्ञात जानकारी के आधार पर ही बनता है और उसके झूठ निकलने की संभावना हमेशा रहती है। नयी जानकारी मिलने पर, आंकड़े बढ़ने पर या ज्यादा बेहतर खाका मिलने पर ये नियम बदले जाते हैं। इसी प्रकार विज्ञान उन्नति करता है।

यह सब भाषा के संदर्भ में कैसे हो सकता है इसके लिए नीचे दिए उदाहरण देखिए— अंग्रेजी में बहुवचन बनाने के नियम से।

मान लीजिए आप कक्षा सात में पढ़ा रहे हैं। कक्षा में विद्यार्थियों से निम्नलिखित शब्दों के बहुवचन पूछिए : इन सब शब्दों के अन्त में "आ" की ध्वनि है :

एकवचन	बहुवचन
लड़का	लड़के
कपड़ा	कपड़े
दरवाजा	दरवाजे
शीशा	शीशे

यदि हम मान लें कि हमें केवल इतनी ही हिन्दी भाषा मालूम है तो हिन्दी में बहुवचन बनाने का क्या नियम है। इस संदर्भ में आसानी से एक परिकल्पना बना सकते हैं:—

नियम—1. हिन्दी में बहुवचन बनाने के लिए "आ" का "ए" कर देते हैं। क्या यह परिकल्पना सही है, इसे देखने के लिए शब्दों का एक दूसरा समूह उनके सामने रखिए।

एकवचन	बहुवचन
अलमारी	अलमारियां
कुर्सी	कुर्सियां
टाटपट्टी	टाटपट्टियां
लड़की	लड़कियां
	आदि।

इसके बाद नियम 1 में सुधार किया जा सकता है और दूसरा नियम बनाया जा सकता है।

नियम—2. हिन्दी में बहुवचन बनाने के लिए यदि शब्द "आ" में खत्म हो तो बहुवचन में "ए" हो जाता है और यदि शब्द "ई" में खत्म हो तो "इयां" हो जाता है। यानि:—

एकवचन	बहुवचन
—आ : :	—ए : :
—ई : 3 :	—इया : :
	आदि।

क्या नियम दो से हिन्दी भाषा के सभी शब्दों के बहुवचन बन सकते हैं? नहीं। शब्दों का एक तीसरा समूह देखिए, इन सब शब्दों के अन्त में "अ" की ध्वनि है:—

एकवचन	बहुवचन
रात	रातें
बस	बसें
बोतल	बोतलें
बात	बातें
छत	छतें
	आदि।

लगता है कि हमें नियम 2 को भी बदलना पड़ेगा व बच्चों को यह सब करने में बहुत मजा आएगा और वे स्वाभाविक रूप से वैज्ञानिक प्रक्रिया का अहसास कर पाएंगे। तीसरा नियम शायद कुछ इस प्रकार होगा:—

नियम—3. हिन्दी भाषा में बहुवचन बनाने के लिए यदि शब्द "आ" में खत्म हो तो बहुवचन में "ए" हो जाता है। यदि "ई" में तो "इयां" हो जाता है और यदि "अ" में तो "ए' हो जाता है। यानि:—

एकवचन	बहुवचन
—अ	—एं : :
—आ	—ए : :
—ई : :	—इयों : :
	आदि।

ध्यान देने की बात यह है कि बहुवचन में क्या परिवर्तन होगा यह इस बात पर निर्भर करता है कि एकवचन में शब्द की संरचना कैसी है, यानि कि शब्द किस ध्वनि में समाप्त होता है?

बच्चे यह भी कहेंगे कि कुछ परिस्थितियों में बहुवचन और एकवचन एक ही होते हैं, जैसे कि:—

एकवचन	बहुवचन
कप	कप
गिलास	गिलास
दिन	दिन
बरतन	बरतन
चाक	चाक
	आदि।

हमारा उद्देश्य यहां भाषा का पूर्ण और सही व्याकरण लिखना नहीं है (यह इस प्रकार से संभव भी नहीं)। हमारा उद्देश्य है उन तरीकों का उदाहरण प्रस्तुत करना जिनसे वैज्ञानिक विज्ञान के नियम बनाते हैं।

एक उदाहरण अंग्रेजी से। अक्सर कहा जाता है कि अंग्रेजी में बहुवचन बनाने के लिए शब्द के आगे S या es लगा दिया जाता है। S कब लगता है और es कब लगता है? इसे बताने के लिए एक नियम है। पर क्या यह

नियम सचमुच इतना सरल है ? नीचे दिए गए शब्द समूहों को ध्यान से बोलिए और सुनिए:–

क		ख	
एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
Cat	Cats	Bag	Bags
Rat	Rats	Dog	Dogs
Pit	Pits	Head	Heads
Book	Books	Bed	Beds
Cup	Cups		आदि ।

क्या "क" और "ख" शब्द समूहों में की आवाज एक जैसी ही है ? ध्यान से सुनिए समूह "क" में S की आवाज S ही –यानि केट्स, रेट्स, कप्स आदि। लेकिन समूह "ख" में S की आवाज S जैसी नहीं है अपितु "ज" जैसी है यानि बेग्ज, टब्ज, डोगज आदि। इस जानकारी के आधार पर हम कैसी परिकल्पना बना सकते हैं ?

नियम–अ. जैसे अंग्रेजी में यदि एकवचन P, T, K जैसी अघोष ध्वनियों में समाप्त हों तो S लगाने से बहुवचन बनेगा और S का उच्चारण "स" होगा। यदि एकवचन B, D, G जैसी घोष ध्वनियों में समाप्त हों तो S का उच्चारण "ज" होगा।

हिन्दी की ही तरह यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि बहुवचन में S का क्या उच्चारण होगा यह इस बात पर निर्भर करता है कि एकवचन में शब्द का क्या रूप है।

लेकिन क्या नियम "अ" अंग्रेजी भाषा के बहुवचन बनाने के नियमों का पूरा विवरण है ? एक और शब्द समूह देखिए:–

एकवचन	बहुवचन
Sea	Seas
Eye	Eyes
Tie	Ties
Pen	Pens
Tin	Tins
Pill	Pills

लगता है यदि शब्द किसी भी बीच ध्वनि (Voiced Sounds) में समाप्त हो तो S का उच्चारण "ज" ही होता है। इस नियम "क" में सुधार कर सकते हैं।

नियम–ब. अंग्रेजी में बहुवचन बनाने के लिए यदि शब्द अघोष (Voiceless) ध्वनियों में समाप्त हो तो S का उच्चारण "स" होगा। यदि शब्द घोष (Voiced) ध्वनियों जैसे कि B, D, G स्वर, "न' 'ल" आदि में समाप्त हो तो S का उच्चारण "ज" होगा। यानि:–

एकवचन	बहुवचन
—अघोष	S—स (S)
—घोष	S—ज (Z)

अभी भी हम अंग्रेजी के सब शब्दों को इस नियम में बांध नहीं पाये हैं।

एकवचन	बहुवचन
Bus	Buses
Kiss	Kisses
Box	Boxes
Church	Churches
Leash	Leashes
	आदि ।

यानि यदि शब्द "स", "श", "च", "ज" में समाप्त हो तो S का उच्चारण "iZ" होता।

नियम–स. अंग्रेजी में बहुवचन बनाने का नियम:–

एकवचन	बहुवचन
—(शब्दान्त) अ	घोष S–S
—	घोष S–Z
— S, Sh, Ch, j	S–iZ

हिन्दी की तरह अंग्रेजी की तरह अं अपवाद हैं:–

एकवचन	बहुवचन
Ox	Oxen
Child	Children
Man	Men

यह बस कुछ उदाहरण हैं जानकारी के आधार पर नियम बनाने के और उस नियम को नयी जानकारी की कसौटी पर आंक कर स्वीकारने के या रद्द करने के।

गरीबी का जहर

–चन्दन यादव

–बापू "अ" अनार का होता है ना ?

–हाँ बेटा "अ" अनार का होता है।

–और "आ" से आम "इ" से इमली, है ना बापू ?

–हां बेटा।

–तो बापू आम और इमली जैसा अनार भी खाने का होता है ? हमको अनार ला दोगे बापू।

–नहीं बेटे। अनार कोई खाते थोड़े ही हैं, वो तो बस पढ़ने के लिये है।

–जवाब सुनकर बच्चा कुछ देर चुपचाप झोपड़ी में यहाँ-वहाँ बिखरे एल्यूमिनियम के दुबके पिटे बरतन और टूटी हुई खाट पर पड़े हुए मैले कुचैले कपड़ों को देखता रहा, फिर

कुछ सोचकर बोल पड़ा।

–बापू "घ" घर का होता है ?

–हाँ बेटे "घ" घर का होता है, इस बार प्रश्नों की बौछार से उकताये बापू की आवाज में तनिक रूखापन था, जिसे बच्चा महसूस नहीं कर पाया।

–फिर सब हमारे घर को झोपड़ी क्यों कहते हैं ?

–बात ये है कि बड़े मकान को घर और छोटे को झोपड़ी कहते हैं। समझ गये ना।

–हाँ बापू समझ गया, बड़े मकान में रहने वाला अमीर और छोटे मकान में रहने वाला गरीब होता है। है ना बापू ?

–हाँ बेटा।

–तो बापू फिर "ग" गरीब का और "झ" झोपड़ी का क्यों नहीं होता ?

–चुप रह साले। ये पढ़ाई वढ़ाई तेरे कू समझ में नई आयेगी, कल से लालाजी की होटल पर काम के लिये जाना, सब कुछ समझ जायेगा।

प्रदूषण के शिकंजे में

पर्यावरण के बढ़ते हुये खतरों को देखते हुए यह जरूरी हो जाता है कि पर्यावरण के मुद्दों की गहराई से जाँच-पड़ताल की जाय और जानकारी हासिल कर उसे अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाया जाय जिससे पर्यावरण के प्रति समाज में चेतना विकसित हो सके। इसी सिलसिले में अंक 17 में वातावरण में व्याप्त प्रदूषण के संबंध में लेख प्रकाशित किया था यहां प्रस्तुत है उसी लेख की अगली किश्त। लेख की सामग्री 'गांधी शांति प्रतिष्ठान' के पर्यावरण कक्ष द्वारा प्रकाशित "देश का पर्यावरण" से ली गई है।

उद्योगों के प्रतिनिधियों ने विचारगोष्ठियों में भले ही थोड़ी-बहुत रुचि दिखायी हो, फिर भी वायु-प्रदूषण को रोकने के मामले में उनका सारा उत्साह अपने दफ्तर के कमरे से आगे नहीं बढ़ पाया है। इस मनोवृत्ति का परिचय ग्रैफाइट इंडिया के एक वरिष्ठ संचालक के इन शब्दों से अच्छी तरह होता है : 'यदि समाज आधुनिक उद्योगों को बढ़ाना चाहता है तो उसे प्रदूषण की कीमत चुकानी ही होगी। यदि ऐसे उद्योगों को बंद कर दिया गया तो समाज को इससे भी भारी कीमत चुकानी पड़ेगी।"

विकसित राष्ट्रों में भी जब हवा को शुद्ध रखने और आगे से दूषित न करने का कानून लागू किया गया था, तब वहाँ के उद्योगपतियों ने भी इसी तरह की ऐंठ दिखायी थी। लेकिन वहाँ कानून पर सख्ती से अमल किया गया। परिणामस्वरूप आज न्यूयार्क, लंदन, पेरिस, टोकियो तथा अन्य अनेक औद्योगिक शहरों में वायु-प्रदूषण की मात्रा काफी घट गयी है।

भारत के अनियंत्रित उद्योगों और मोटर-वाहनों की संख्या पश्चिमी राष्ट्रों की तुलना में बहुत ही कम है, लेकिन प्रदूषण फैलाने की क्षमता में ये उनसे कम नहीं हैं। यदि भारत के शहरों की प्रदूषण की स्थिति को और बिगड़ने नहीं देना है तो पहले कुछ बुनियादी कदम उठाने होंगे। घरों से होने वाले प्रदूषण को सुधरे चूल्हों के द्वारा घटाया जा सकता है। मोटर गाड़ियों से निकलने वाले धुंए को कम करने के यंत्र लगाये जा सकते हैं। उसके लिए वाहन के मालिकों को विवश किया जा सकता है। सँकरी और तंग सड़कों पर यातायात को नियंत्रित किया जा सकता है। वायु-प्रदूषण नियंत्रण मंडलों को फौरन हवा का सर्वेक्षण कराना चाहिए। एक बार धुंए के निकलने की मात्रा निर्धारित हो जाती है तो उस नियम का पालन ठीक हो रहा है या नहीं, यह देखने के लिए नागरिकों के दल गठित किये जाने चाहिए। उसका उल्लंघन करने वालों को, उनके द्वारा की गयी क्षति के अनुपात में दंडित करना चाहिए।

यह सब करने के लिए दृढ़ संकल्प चाहिए और अपने पर्यावरण को साफ रखने के प्रति हार्दिक आस्था चाहिए। आज तक तो हमारे प्रशासकों में इन गुणों का बहुत अभाव रहा है।

मौसम और कार्बन डाई आक्साइड :

वातावरण में कार्बन डाई आक्साइड की बढ़ती मात्रा के कारण इस सदी के अंत तक विश्व की जलवायु में भारी परिवर्तन आ सकता है। यह हाल के वर्षों में वैज्ञानिकों की गंभीर चर्चा का विषय बना हुआ है।

वैज्ञानिक अब मानने लगे हैं कि वातावरण में कार्बन डाईआक्साइड की इस वृद्धि के कारण धरती पहले से ज्यादा गरम होती जा रही है। विभिन्न देशों पर इसके क्या-क्या परिणाम होंगे यह अभी वैज्ञानिकों के बीच विवाद का विषय बना हुआ है, लेकिन अनेक वैज्ञानिक जैसा चित्र प्रस्तुत कर रहे हैं, उससे गंभीर चिन्ता ही पैदा होती है।

दुर्भाग्य से, विकासशील देश अपने "वर्तमान" में इस कदर उलझे हुए हैं कि भविष्य की समस्याओं पर उनका ध्यान जा नहीं पा रहा है। लेकिन जागतिक जलवायु में होने वाले परिवर्तन का प्रभाव भारत सहित सभी विकासशील राष्ट्रों पर भी अवश्य पड़ेगा। इसलिए आने वाले खतरों के प्रति सावधान होना बहुत जरूरी है। उदाहरण के लिए, हो सकता है कि भारत में सदियों से चली आ रही कृषि की पद्धति बदल जाय और फसलों की पैदावार आज से भी ज्यादा अनिश्चित हो जाये।

पर इससे पहले यह समझ लें कि वातावरण में कार्बन डाईआक्साइड का जमाव क्यों होता है?

धरती में ऐसे कुछ तत्व हैं जो सीमित हैं और समाप्त होने वाले हैं और वे सामान्य परिस्थिति में बदलते नहीं हैं। इनमें से कुछ अंश स्वतंत्र तत्व के रूप में रहते हैं और बाकी अंश प्रायः दूसरे तत्वों के साथ उनके एक अंग के रूप में मिले-जुले रहते हैं। कार्बन स्थिर तत्वों में से है।

यह कार्बन धरती के नीचे बड़ी मात्रा में हाइड्रोकार्बन (कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस) के रूप में और कार्बोनेट जैसे मिश्र कार्बन के रूप में हैं। समुद्र में भी पानी में घुले कार्बन डाईआक्साइड के रूप में और कार्बोनेट के रूप में काफी मात्रा में कार्बन है। कार्बन डाई-आक्साइड के रूप में वातावरण में भी बहुत कार्बन है। कार्बन का बहुत बड़ा भाग पौधों के जीवाणु से लेकर प्राणियों व मनुष्यों तक सभी जीवों में है।

धरती के नीचे कोयले, तेल और प्राकृतिक गैस के रूप में दबे कार्बन को हाथ न लगाकर वैसे ही बने रहने देते तो बाकी वातावरण में, समुद्र में और जीव-राशि में कार्बन का आवर्त सहज रूप में चलता रहता और नैसर्गिक स्थितियाँ उसको संतुलित रख लेती। जैसे वायु-संचार के द्वारा जो कार्बन डाईआक्साइड वातावरण में फैलती है वह पौधों और पेड़ों के द्वारा फोटोसिंथेसिस प्रक्रिया से जीवों में लौट आती है।

फोटोसिंथेसिस प्रक्रिया में पेड़ वातावरण में विद्यमान कार्बन डाईआक्साइड का बहुत बड़ी मात्रा में उपयोग करते हैं। पृथ्वी की विकास-यात्रा के दौरान प्रागैतिहासिक काल में लगातार बड़े-बड़े भूकंप आते रहे थे और तब पेड़-पौधों से भरे बड़े-बड़े क्षेत्र धरती में समा गये थे। सिद्धान्ततः इन घटनाओं से वातावरण में कार्बन डाईआक्साइड की हलचल घट सकती थी। लाखों वर्ष पहले शायद ऐसा ही कुछ हुआ होगा और धरती के नीचे का कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस के रूप में कार्बन का वर्तमान भंडार निर्मित हुआ होगा। ये सारे हाइड्रो कार्बन के भंडार औद्योगिक युग के आरंभ होने तक दबे ही रहे। उस समय तक लोग अपनी ऊर्जा की जरूरत लकड़ी जलाकर पूरी कर लेते थे, चूंकि आबादी काफी कम थी इसलिए जंगलों का नाश नहीं हुआ। फिर जीवन स्तर ऊंचा होने से और औद्योगीकरण की वृद्धि के कारण हाइड्रो कार्बन की जरूरत बढ़ती गयी। इस प्रकार धरती के नीचे दबा पड़ा खूब सारा कार्बन अब वातावरण में जमा होने लगा है। एक अनुमान के अनुसार धरती से निकाले और जलाये गये हर एक टन कोयले से 0.693 टन कार्बन, कार्बन डाईआक्साइड के रूप में, हर एक टन अपरिष्कृत पेट्रोलियम से 0.769 टन कार्बन, और हर दस लाख घनमीटर प्राकृतिक गैस से 524 टन कार्बन वातावरण में फैलता है।

दूसरे शब्दों में, आज वातावरण में कार्बन डाईआक्साइड का यह जो जमाव हुआ है और बढ़ रहा है उसके लिए हमारा रहन-सहन और हमारी गतिविधियां ही जिम्मेदार हैं।

अनुमान है कि कार्बन डाईआक्साइड का सालाना उत्पादन जो सन् 1948 में 550 करोड़ टन था, 1980 में 2010 करोड़ टन तक हो गया। यानी सालाना लगभग 4.3 प्रतिशत की दर से वृद्धि हो रही है। इस कुल कार्बन डाईआक्साइड का 25 प्रतिशत हर साल अकेले अमरीका में पैदा होगा। उत्तर अमेरिका, यूरोप और रूस मिलकर बाकी 75 प्रतिशत पैदा करेंगे। इस प्रकार समस्या मुख्य-रूप से अत्यधिक ऊर्जा का उपयोग करने वाले विकसित देश ही पैदा कर रहे हैं।

प्रदूषण और मौत :

कर्नाटक में चित्रदुर्ग जिले के नेलवागलु गांव के लोगों के सामने जीवन और मृत्यु का सवाल खड़ा हो गया है। या तो वे अपने पुरखों के गांव से, जहां का पानी और हवा पास के रसायन कारखाने के धुंए से जहरीले हो गये, चिपके रहें और दुखभरी क्रमिक मौत का सामना करें, या कहीं दूसरी जगह जाकर बसने को तैयार हो जायें। लेकिन वे जायें कहाँ ?

पर्यावरण की इस क्रूर क्षति का दोषी है– "हरिहर पोली फाइबर्स"। बिरला की यह कंपनी 1961 में 25 करोड़ की लागत से बनायी गयी थी। कल्पना थी कि क्षेत्र के ग्रामीणों को उससे अच्छा रोजगार मिलेगा और उनके लिए वह एक वरदान बनेगी, लेकिन ये सब कोरा सपना रह गया, बल्कि वास्तविक अभि-शाप सिद्ध हुआ।

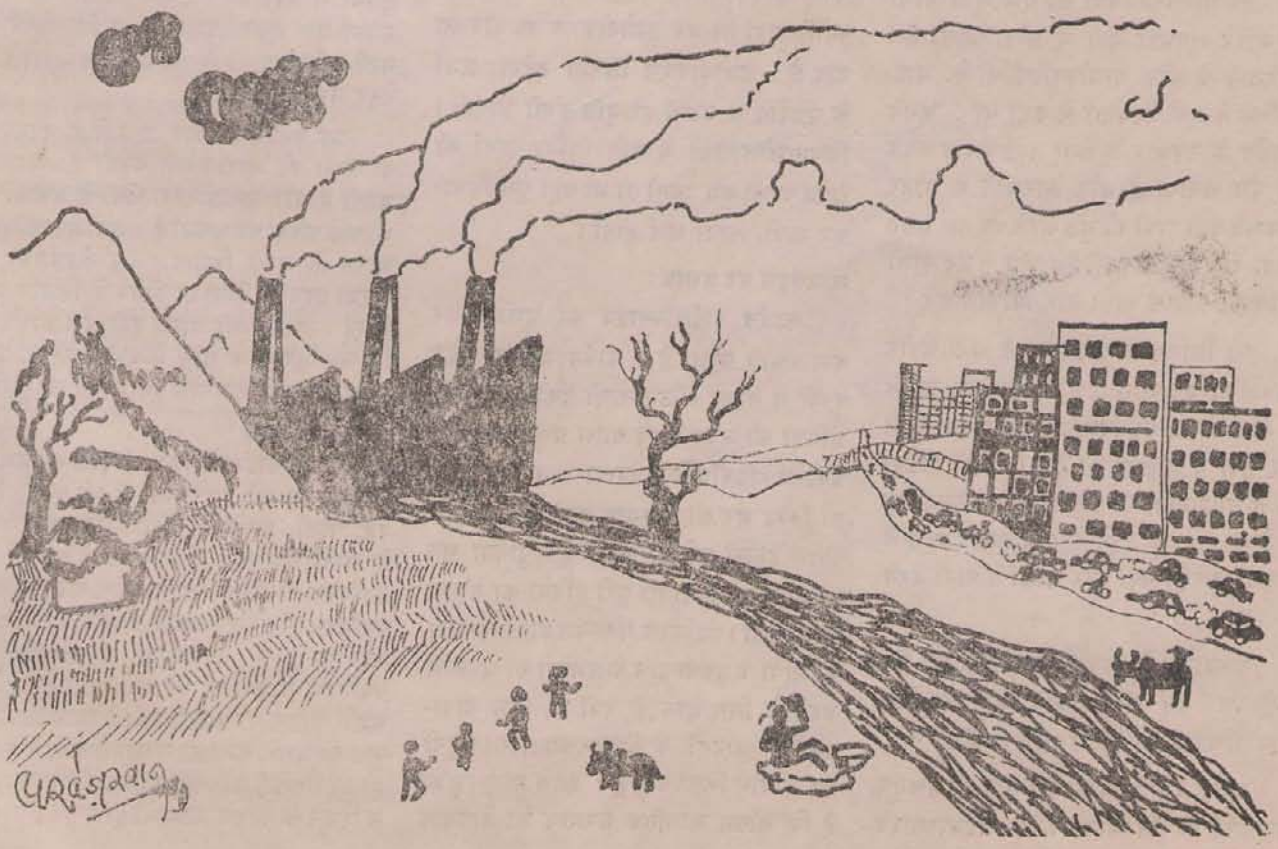

पाक्षिक पत्र "इंडिया टुडे" में प्रकाशित एक रिपोर्ट में कहा गया है कि "कारखाने में काम शुरू हुआ, और उसकी ऊँची चिमनियों से कई रासायनिक द्रव्यों और अन्य जहरीली चीजों से मिली कालिख की वर्षा होने लगी। झोपड़ियों के टेके के लिए खड़ी की गयी बल्लियाँ और छत की कड़ियाँ इतनी जर्जर हो गयी हैं कि वे अब किसी भी क्षण धूल चूम सकती हैं।" दो साल पहले हरिहर पोली फाइबर्स ने नेलबागलु स्कूल को पीतल का एक छंद्रा भेंट किया था, पत्रिका के फोटोग्राफर ने उसे उठाने की कोशिश की तो पता चला कि वह गल चुका था।

यहाँ के लोगों में फोड़े-फुंसियाँ, चेचक की किस्म के दाग, चमड़ी का सूखना, जलन, घाव, खांसी और सीने में जलन, पीलिया की तरह आँखों में पीलेपन की बीमारियाँ हो रही हैं। पेट की अजीब-अजीब तकलीफें जो पहले कभी नहीं हुई थीं, अब चाहे जिसको हो जाती हैं। मवेशी भी कई नयी और अजीब बीमारियों से पीड़ित हैं।

उपचारित अपशेषों को एक खुली नाली के जरिये तुंगभद्रा नदी में छोड़ा जाता है। कारखाने के चीफ एग्जीक्यूटिव श्री के. आई. फिलिप ने एक भेंटवार्ता में कहा था : "हमने अपशेष के उपचार के लिए 1.2 करोड़ रुपये का यंत्र लगाया है और कारखाने से बाहर निकलने वाले पानी को शुद्ध करने पर 30,000 रुपया रोज खर्च कर रहे हैं। ऐसे में बंद नाली के लिए 25 लाख रुपया और क्यों खर्च करें?"

श्री फिलिप के कथनानुसार 3.2 करोड़ रुपयों का इलेक्ट्रोस्टेटिक प्रिसिपेटेटर लगाने के बाद "नेलबागलु निवासी पर्वतीय हवा जैसी शुद्ध हवा में सांस ले रहे हैं। फिर भी इंडिया टुडे के संवाददाता का कहना था कि "नेलबागलु में केवल 24 घंटे रहने के बाद हमारे बदन में खुजली शुरू हो गयी और आंखों से पानी बहने लगा था।'

नेलबागलु के निवासी हताश हो गये हैं। उन्हें बस 40 एकड़ भूमि और घर मिल जाय तो काफी है। लेकिन वह देगा कौन?

अनेक वैज्ञानिकों को इस बात का सचमुच आश्चर्य है कि कुल जितनी कार्बन डाईआक्साइड कोयला आदि के जलने से तैयार हो रही है, वातावरण में उसकी आधी मात्रा की वृद्धि पायी जाती है। शायद आसमान में फेंकी जाने वाली कार्बन डाईआक्साइड का अधिकांश हिस्सा समुद्र सोख लेता होगा। लेकिन इसके बारे में वैज्ञानिकों में मतभेद हैं। कई लोग समुद्र के अलावा अन्य माध्यम भी बताते हैं जहां कार्बन डाईआक्साइड जज्ब होती होगी।

अगर समुद्र का योगदान सही है तो कई वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि थोड़े अरसे के बाद वातावरण में कार्बन डाईआक्साइड की मात्रा निश्चित बढ़ेगी, क्योंकि एक मर्यादा से अधिक कार्बन डाईआक्साइड को जज्ब करने की क्षमता समुद्र में हमेशा नहीं रहेगी।

वातावरण में कार्बन डाईआक्साइड की भारी वृद्धि अधिकतर इस बात पर निर्भर है कि किस हद तक खनिज इंधनों का उपयोग जारी रहेगा। यद्यपि विकसित देशों में ऊर्जा का उपयोग उतना ही जारी रह सकता है या उसमें वृद्धि बहुत कम ही हो, लेकिन पूरी सम्भावना यही है कि विकासशील देशों में वह बढ़ेगा क्योंकि वहां तो अब उद्योगीकरण का दौर आ रहा है। उद्योगीकरण जितना बढ़ेगा, ऊर्जा के उपयोग में उतनी ही वृद्धि होती जाएगी। विकासशील देशों में प्रति व्यक्ति ऊर्जा की खपत काफी कम रहेगी तो भी वहां कुल मिलाकर ऊर्जा ज्यादा खर्च होगी।

जीवमंडल पर प्रभाव :

कार्बन डाईआक्साइड का भूमंडल पर क्या प्रभाव पड़ता है? कार्बन डाईआक्साइड पृथ्वी से वापस लौटने वाली इंफ्रोरेड रेडियोधर्मिता को जज्ब करने वाला प्रमुख तत्व है। इंफ्रोरेड रेडियोधर्मिता ज्यादा जज्ब होने लगेगी तो विश्व भर का तापमान बढ़ने लगेगा। इसे "ग्रीन हाउस इफेक्ट" कहते हैं। दुनिया भर का तापमान बढ़ेगा तो पूरी दुनिया का मौसम भी बदलेगा। पर्यावरण में कार्बन डाईआक्साइड की मात्रा के दुगनी होने के प्रभावों का अध्ययन करने के लिए हाल के वर्षों में, आम वातावरणीय आवर्तों के कंप्यूटर-आधारित नमूनों का उपयोग किया गया है। इससे मालूम हुआ है कि औसत जागतिक धरातल का तापमान जो आज लगभग 15 डिग्री सेंटीग्रेड है, 2-3 डिग्री बढ़ सकता है। ध्रुवीय क्षेत्रों में तापमान की वृद्धि इससे भी ज्यादा हो सकती है।

प्रयोगों से पता चलता है कि कार्बन डाईआक्साइड के जमाव की वृद्धि से टमाटर और ककड़ी जल्दी फूलते हैं, लेकिन गेहूं, ज्वार, मकई, कपास और सूर्यमुखी जैसी फसलों में फूल देरी से आते हैं। ऐसी देरी उष्ण-कटिबंध और उप-उष्ण-कटिबंध के भू-भागों की खेती के लिए बहुत बुरी हो सकती है। कुछ साल पहले उत्तर भारत में फरवरी महिने के तीसरे-चौथे सप्ताह में अचानक तापमान बढ़ा था, जिसके बारे में कहा गया कि उससे गेहूं की पैदावार घट गयी थी। मध्यभारत में दो-तीन डिग्री सें.ग्रे. तापमान बढ़ता है तो वाष्पीकरण में दैनिक दो-तीन मि.मि. की वृद्धि हो सकती है और उसके कारण पानी का संकट बढ़ सकता है। इसका खेत की पैदावार पर बुरा असर होगा ही। पंजाब में गेहूं की फसल के लिए सिंचाई की अच्छी-खासी सुविधा है तो भी पश्चिमी बंगाल; जहाँ गेहूं की खेती नई है; की तुलना में वहां की पैदावार ज्यादा नहीं है। इसका एक मुख्य कारण यह है कि पंजाब में मार्च-अप्रैल महीनों में जब गेहूं के दाने पड़ते हैं बेहद गरमी पड़ती है।

इस प्रकार तापमान 2-3 सें.ग्रे. बढ़ता है तो पानी की आवश्यकता बढ़ती है, पैदावार घटती है और अन्ततोगत्वा खेती के तरीकों में भी फर्क करना पड़ सकता है। इसी प्रकार, पूर्वी भारत के अच्छे किसानों और वैज्ञानिकों से ज्यादा धान की पैदावार पंजाब के किसान कर रहे हैं। इसका भी शायद यही एक कारण है कि जब खरीफ के धान में दाने पड़ते हैं, उस समय पंजाब में तापमान पूर्व भारत की तुलना में नीचा रहता है।

कार्बन डाईआक्साइड की वृद्धि का प्रभाव भूमंडल पर कई दूसरे रूपों में भी पड़ता है। पेड़, पौधों, प्राणियों, कीड़ों और जीवाणुओं के नाना प्रकार के मिश्रणों से इस नैसर्गिक पर्यावरण की रचना हुई है। यह सब मिलकर पर्यावरण में संतुलन बनाये रखते हैं। तापमान और पानी की उपलब्धता के परिवर्तन से पर्यावरण में जरा-सा भी फर्क आता है तो इन सबके जीवन पर काफी प्रभाव पड़ सकता है। कुछ को उससे लाभ हो सकता है और वे प्रबल हो जा सकते हैं और कई जीव उस प्रतिस्पर्धा में न टिकने के कारण खत्म भी हो सकते हैं। ○

सक्रांमक रोग : नारू

इस वर्ष धार जिले के गुराड़िया गांव में नारू रोग से पूरा गांव पीड़ित हो गया। हालत यह हो गई कि गांव में कोई भी किसान और मजदूर इस हालत में नहीं बचा कि वह खेती का काम कर सके। धार के जिला प्रशासन ने गुराड़िया गांव में खेती के काम का इन्तजाम करवाया। खबर फैलने पर स्वास्थ्य विभाग ने भी कुछ काम किया है। सवाल यह है कि आग लगने पर ही कुआं क्यों खोदा जाता है ? विज्ञान और तकनॉलाजी के विकास के ढोल तो बहुत पीटे जाते हैं, परन्तु इन साधारण बीमारियों की रोकथाम के लिए समय रहते कदम कब उठाये जायेगें ? धार जिले के कालूराम शर्मा नारू रोग के सम्बन्ध में जानकारी पेश कर रहे हैं।

नारू रोग विश्व में बहुत पुराना है। वर्ष 1674 से इसका सही रूप प्रकाश में आया है। यूनान के पुराने चित्रों में मनुष्य के शरीर से नारू को एक लकड़ी पर लपेट कर निकालते हुए दिखाया गया है। यह रोग भारत, बर्मा, तुर्किस्तान, सूडान, मिस्र, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, वेस्टइण्डीज, दक्षिण अमेरिका तथा अफ्रीका (पूर्वी-पश्चिमी तथा मध्य भाग में) आदि देशों में पाया जाता है। भारत के लगभग एक करोड़ 22 लाख लोग नारू के शिकार हैं। यह रोग करीब 60-100 सेमी. लम्बे, सफेद दूधिया रंग के कृमि के संक्रमण से भेद कर बाहर निकल आता है।

यह रोग विशेषकर उन गाँवों में सघन रूप से व्याप्त है, जहाँ पीने के पानी का मुख्य स्रोत ताल, तालाब, गड्ढे तथा बावड़ी है।

राष्ट्रीय संचारी रोग संस्थान के हाल के सर्वेक्षण के अनुसार भारत के सात राज्यों में मध्य प्रदेश भी है, जहाँ नारू मिलता है। दिसंबर 1981 में किये गये एक सर्वे के अनुसार नारू रोग प्रभावित प्रदेशों में नारू रोग से पीड़ित लोगों की संख्या निम्नानुसार है—

प्रदेश	गाँव	जनसंख्या पीड़ित
आन्ध्रप्रदेश	585	10,51,985
गुजरात	315	5,04,802
कर्नाटक	722	11,69,965
महाराष्ट्र	932	6,89,128
मध्यप्रदेश	2879	28,94,736
राजस्थान	3140	58,57,765
तमिलनाडु	9	10,048

नारू रोग एक ग्रामीण रोग है। शहरी लोग इससे ज्यादा प्रभावित नहीं हैं। विश्व में नारू रोग के प्रसार के दो प्रमुख क्षेत्र भारत तथा पश्चिम अफ्रीका आज भी हैं।

नारू कृमि अपना जीवन-चक्र दो पोषकों में पूरा करता है। प्राथमिक पोषक मनुष्य है, जबकि द्वितीयक पोषक पानी में रहने वाला कीट साइक्लोप्स है। नारू रोग मादा कृमि से होता है। नर मादा की तुलना से 20 गुना छोटा और चार गुना पतला होता है।

जब मनुष्य पानी पीता है, तो पानी के साथ संक्रमित साइक्लोप्स भी आहारनाल में चले जाते हैं, जहाँ साइक्लोप्स तो पाचक पदार्थों की उपस्थिति में पच जाते हैं किन्तु उसके शरीर में स्थित नारू कृमि के लार्वा पर पाचक -पदार्थों का कोई असर नहीं होता है, क्योंकि उसके शरीर पर कठोर क्युटिकल का आवरण चढ़ा रहता है। अब लार्वा आंत्र के ऊतकों में अपना स्थान बना लेते हैं तथा वृद्धि करते रहते है। लगभग 6 महिने के पश्चात् नर और मादा कृमि का मैथुन होता है। मैथुन क्रिया के दौरान मादा कृमि नर को अपने शरीर में जकड़ लेती है, जिसे वह तब तक नहीं छोड़ती है, जब तक कि वह निषेचित न हो जाये। इस जकड़न में नर कृमि मर जाता है। अब गर्भवती मादा शरीर के

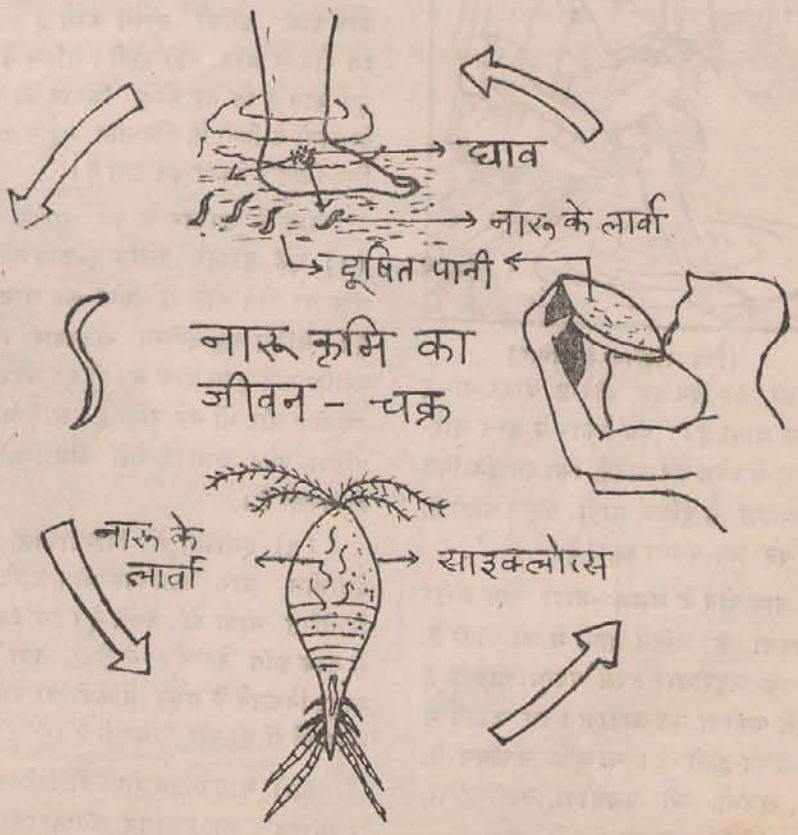

ऐसे अंगों में प्रवास करती है जो भाग पानी के सम्पर्क में आता हो, जैसे घुटने के नीचे के अंग (पैर), कंधे पर पानी ले जाने वालों की पीठ, जीभ, गुप्तांग आदि। शरीर की त्वचा तक पहुँचते-2 मादा कृमि की लंबाई एक मीटर तक बढ़ जाती है, और कभी-कभी उसे त्वचा के नीचे रेंगते हुए अनुभव किया जा सकता है। त्वचा के अंतिम भागों में आ जाने पर कृमि एक जहरीली तरल पदार्थ छोड़ता है, जिससे त्वचा पर फफोले उठ आते हैं। इन फफोलों में भयंकर जलन होती है, रोगी इस जलन को शांत करने के लिए भागकर पानी में अपना अंग डुबोता है, तो पानी में फफोला फट जाता है तथा दुधिया नारू के बच्चे (लार्वा) पानी में बिखर जाते हैं। नारू निकलने का कोई समय निर्धारित नहीं है, पूरा नारू 30 दिन

(चित्र नईदुनिया से साभार)

से लेकर 90 दिन तक धीरे-2 बाहर आकर निकल जाता है। इस प्रकार ये बच्चे साइक्लोप्स में प्रवेश कर जाते हैं, फिर इन संक्रामित साइक्लोप्स से दूषित पानी मनुष्य पीता है, तथा यह चक्र चलता रहता है।

नारू रोग के लक्षण:—मादा नारू शरीर की त्वचा के अंतिम भागों में आ जाती है, तो एक जहरीला तरल पदार्थ छोड़ती है जिससे फफोला उठ जाता है। इस फफोले में खूब जलन होती है। नारू के संक्रामण से, दमा, खुजली, जी मचलाना, उल्टी होना, अतिसार आदि लक्षण दिखाई देते हैं।

नारू रोग से हानियाँ:—(1) फफोले के फूटने से जो घाव बनता है उसमें मवाद पड़ सकता है। धूल-मिट्टी के लगने से टिटेनस की बीमारी हो सकती है, जिस अंग से नारू निकलता है, वहाँ के हड्डियों के जोड़ खराब हो सकते हैं और अन्त में रोगी लंगड़ा-लूला हो जाता है।

(2) नारू रोग से अधिकतर ग्रामीण जनता प्रभावित होती है, जो या तो खेती या मजदूरी करती है। नारू कृमि का त्वचा से बाहर निकलने का समय भी ऐसा होता है कि जब मजदूर और किसानों को खेत में काम करने की आवश्यकता होती है।

(3) नारू रोग से पीड़ित ग्रामीण परिवारों के बच्चों के पालन-पोषण और स्कूल की शिक्षा पर बुरा असर पड़ता है। इस प्रकार नारू प्रभावित क्षेत्र विकास की दिशा में पिछड़ जाते हैं, और निरन्तर पिछड़ेपन का दुष्चक्र सहते हैं।

उपचार तथा उन्मूलन

नारू रोग को रोकना अन्य किसी भी रोग से आसान है। फिर भी स्वास्थ्य योजनाकार प्राय: उसकी उपेक्षा करते हैं क्योंकि इस रोग से मौत नहीं होती। लेकिन वे यह भूल जाते हैं कि यह कीड़ा किसान को खेती के कामों के दिनों में, तीन-तीन महीने तक के लिए बिल्कुल बेकार कर देता है।

नारू के उपचार के कई तरीके हैं—(1) एक पुराना इलाज है—कृमि को एक सींक पर रोज थोड़ा-2 लपेट कर खींच लेते हैं। लेकिन यह तरीका खतरनाक भी है, क्योंकि यदि कृमि बीच में ही टूट जाये तो तकलीफ और भी बढ़ जाती है। आगे चलकर गठिया और जलोदर जैसी बीमारियाँ भी हो सकती हैं।

(2) एलोपेथी में निरिडाजोल, थाएबेंडाजोल और मेट्रोनियाडेजोल आदि की निर्धारित मात्रा दी जाती है। इन दवाइयों से नारू कृमि बेहोश हो जाते हैं, तथा उनके बाहर निकलने के समय में कमी आ जाती है, तथा दर्द में भी राहत मिलती है।

(3) नारू ग्रसित रोगी को टिटेनस टाई आक्साइड का इंजेक्शन लगाना चाहिए।

(4) दूषित पानी को उबालकर, छानकर पीना चाहिये।

नारू उन्मूलन के लिए जल व्यवस्था पर नियंत्रण जरूरी है। नारू कृमि के चक्र को रोकने के लिए गाँवों की बावड़ियों को सुरक्षित कुओं में बदल देना चाहिये, ताकि रोगी बावड़ी के पानी से अपना सम्पर्क न कर सकें। गाँवों के तालाब, बावड़ियाँ आदि जिनका पानी ग्रामीण लोग पीते हैं, उसमें शुद्धीकरण के लिए टोमाफास जैसे रसायनों का उपयोग करना चाहिए। **नारू उन्मूलन में स्वास्थ्य शिक्षा का विशेष महत्व है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत नारू उन्मूलन सम्बन्धी पोस्टर, पेम्पलेट, टिन प्लेट, स्लाईड, फिल्म शो आदि का प्रचार-प्रसार करवाना चाहिये।**

नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ कम्युनिकेबल डिसीजेज की 1982 की रिपोर्ट के अनुसार म. प्र. के नारू प्रभावित जिले इस प्रकार है—

जिला	विकास खण्ड	गाँव	जन संख्या
खरगौन	14	109	1,65,277
भोपाल	2	10	15,675
दमोह	3	5	4,858
देवास	6	35	1,38,514
धार	13	545	2,91,705
गुना	3	162	2,85,352
होशंगाबाद	4	14	18,998
इंदौर	3	25	68,375
झाबुआ	9	325	2,11,813
खंडवा	2	13	31,472
मंदसौर	5	62	1,42,418
राजगढ़	6	628	3,13,604
रतलाम	6	58	1,48,531
सागर	10	185	2,37,705
सीहोर	4	110	1,12,995
शाजापुर	7	394	3,02,785
शिवपुरी	3	24	14,527
टीकमगढ़	1	2	1,349
उज्जैन	6	110	2,42,626
विदिशा	6	63	1,32,456

○

गेहूँ ने रंग बदला

—रमेशदत्त शर्मा

श्रीमती चंद्रकिरण सोनरेक्सा की कहानी "देसी गेहूँ" का एक दृश्य :

"छी ! "चंदों ने नाक चढ़ाई, 'लाला वो भी कोई गेहूँ है। लाल-लाल भुंजा हुआ सा लगता है, मानों किसी ने उसका सारा सत निचोड़ लिया हो। रोटी ऐसी चिकड़ी बनती है, जैसे चमड़े की हो। एक बार मैं ले आई थी, तो हमारे उन्होंने उसकी रोटी छूकर न दी। लाला, हमें तुम कुछ महँगा ही दे दो, हम तो दो क्या पौने-दो सेर का भी देसी गेहूँ ले लेंगे।"

'अरी हवा खा, 'लाला दो टके के मजदूर की औरत देखकर तिनक पड़ा, 'तू पौने दो लिए फिरती है। देसी गेहूँ बाजार में है ही नहीं। जब आएगा तो भी समझ ले, चौदह-बारह छटाक का बिकेगा।"

उस दिन चंदों का पति बुधई भी—जो गिरहकटी छोड़कर रिक्शा चलाने लगा था, 'मोटे शरबती दाने के देसी गेहूँ' को ललचाई आँखों से देखकर खाली हाथ लौट आया।..... फिर पाड़ेगंज के अनाज के गोदाम से देसी गेहूँ की बोरी चुरा कर ला रहा था, पकड़ा गया, और चंदो हवालाती दागी की लुगाई बन गयी।

दूसरे विश्वयुद्ध से पहले हमारा देश अनाज बाहर भेजता था। विश्वयुद्ध के बाद वह उन देशों में आ गया था जो अपना पेट भरने के लिए दूसरे देशों का मुँह जोहते थे। मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, और नावदाटोली-महेश्वर की खुदाई में मिले गेहूँ के दाने बताते हैं कि पुराने जमाने से (लगभग पाँच हजार वर्ष से) भारत का प्रमुख धान्य रहा है। वैज्ञानिक मानते हैं कि अफगानिस्तान, अबीसीनिया और भारत से ही गेहूँ सारी दुनिया में फैले आश्चर्य है कि वेदों में गेहूँ (गोधूम) का जिक्र नहीं है। आज इस शस्य-श्यामला भूमि की हालत यह है कि बुधई-जैसे कितने ही इसके बेटे अमरीका से आए भुंजे-से चेहरे वाले लाल गेहूँ को गले से नीचे उतार नहीं पाते और शरबती गेहूँ खेतों की गोद से निकलकर सीधा गोदाम में पहुँचता है।

. . . कड़कती धूप, पसीने से लथपथ एक सांवला नौजवान गेहूँ के गोरे खेत में खड़ा है। एक-एक बाल लेता है और हथेली पर रगड़ कर दाने निकालता है। फिर ध्यान से दानों को देखकर पास ही रखे बोरे में या बाल्टी में डालता है। रगड़ते-रगड़ते हथेली लाल हो गई है। तीखे सीकुरों ने कई बार उसकी हथेली में धँस-धँस कर उसे परेशान कर दिया है।

आज से नहीं, पिछले एक महीने से चौबीस वर्षीय जार्ज वर्गीज का नित्य नियम बन गया है कि पौ फटते ही खेत पर पहुँच जाना, फिर जहाँ कल छोड़ा था, वहाँ से एक-एक पौधे की बाल लेकर उसको हथेली पर रगड़कर दानों का रंग देखना। बारह-एक के बीच होस्टल जाकर खाना खा लेता और फिर खेत पर।

मैंने कहा—"हमारे यहाँ तो जब किसान खेत पर काम करता है, तो उसकी पत्नी वहीं उसे खाना या "कलेऊ" पहुँचा देती है। तुम्हारे लिए ऐसा इंतजाम नहीं हो सकता था ?"

जार्ज कुछ नहीं बोला, शर्माकर, रह गया।

पूरे एक महीने में उसने गेहूँ के 1,20,000 पौधों की बाल रगड़ डालीं। यह पूरा का पूरा खेत लाल गेहूँ का था। इन पौधों को खुराक दी गई थी। इस विकीरण का असर यह हुआ कि 1,20,000 पौधों में जार्ज को कुल तीस पौध ऐसे मिले हैं, जिनके दानों का देसी शर्बती गेहूँ से टक्कर लेता है। अब इनको बोया जाएगा और फिर जो फसल होगी उसके दानों का रंग देखा जाएगा। जार्ज को पूरा भरोसा है कि लाल गेहूँ के इन मुट्ठी भर रंग बदले दानों से फसल दर फसल उगाते जाने के बाद एक दिन उन सभी चंदों और बुधइयों की शिकायत दूर की जा सकेगी, जो लाल रंग के गेहूँ से घृणा करते हैं।

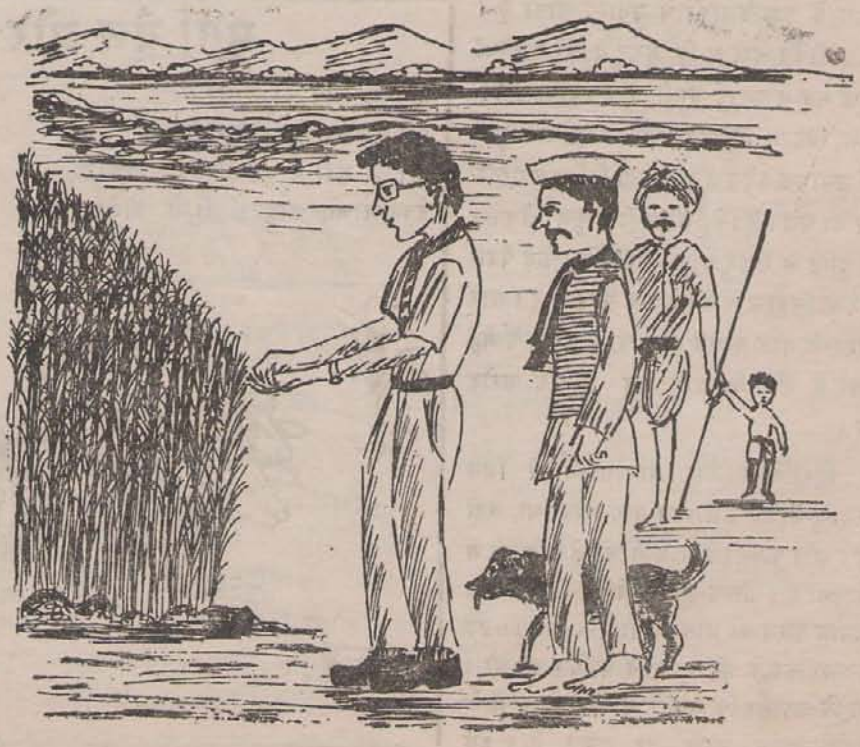

गेहूँ ने रंग बदला तो क्यों ? वास्तव में आज का विज्ञान फसलों के रंग-ढंग बदलने में बड़ा माहिर हो गया है। पहले से अधिक पैदावार वाली, मोटे दाने वाली, दानों की अधिक कतारों वाली, अधिक प्रोटीन और अधिक विटामिन वाली और पहाड़ों से लेकर रेगिस्तानों तक तरह-तरह की जमीनों में उगने वाली फसलों की नई-नई किस्में अब वनस्पति विज्ञानियों के इशारों पर पनपती जा रही है। क्योंकि वे प्रकृति के उस रहस्य को समझ गए हैं जिसने इतनी विविध वनस्पतियों और भाँति-भाँति के जंतुओं को जन्म दिया है। गेहूँ को ही लें तो कभी ये एक मामूली घास जैसा था, जिसे भूमध्य-सागरी प्रदेश की घाटियाँ मिट्टी में आज भी कुछ आदिवासी जातियाँ उगाती हैं। और आज सारी दुनिया में अठारह जातियाँ है गेहूँ की; भारत में गेहूँ की पाँच जातियाँ मिलती हैं जिनके वैज्ञानिक नाम हैं : टिटिकम एस्टीवम, टि. (टिटिकम) डुरम, टि. डाइकाकम, टि. स्फीरोकाकम, और टि. टर्जिडम। इनमें से टि. स्फीरोकाकम और टि. टर्जिडम की खेती अब कोई नहीं करता। टि. डाइकाकम महाराष्ट्र, मैसूर, आन्ध्रप्रदेश और मद्रास के कुछ इलाकों में उगाया जाता है। टि. एस्टीवम और अ-ट्रि. डुरम ये दो जातियाँ प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं। पंजाब, उत्तर-प्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश और राजस्थान मुख्य गेहूँ उगावक प्रदेश हैं और यहाँ टिटिकम एस्टीवम का चलन है। गेहूँ की खेती के कुल क्षेत्रफल की दृष्टि से उत्तर प्रदेश और प्रति एकड़ पैदावार के लिहाज से पंजाब सब से आगे है। सारे भारत में तीन करोड़ तीस लाख एकड़ में गेहूँ होता है और पैदावार कुल है एक करोड़ टन।

हिरोशिमा और नागासाकी में जिस परमाणु-शक्ति ने ताण्डव नृत्य किया था, वहीं आज और फसलों के साथ-साथ गेहूँ के सुधार में भी लगी है। फसल सुधार के लिए एक्सरे का उपयोग करने की बात पहली बार सन् 1927 में अमरीका के प्रो. मुलर ने घोषित की थी। उन्होंने बताया कि एक्सरे से पौधों के गुणों के वाहक-गुणसूत्र बदले जा सकते हैं। इस परिवर्तन को विज्ञान उत्परिवर्तन (म्यूटेशन) कहता है। इन उत्परिवर्तित किस्मों से जो अच्छी हों, उन्हें छांट छांट कर बढ़िया-बढ़िया किस्में निकाली जा सकती है।

भारत में डा. स्वामिनाथन् ने इस ओर ध्यान दिया और आज वे अपने विषय के अन्यतम विशेषज्ञ हैं। उन्होंने भारतीय कृषि अनुसंधान शाला के वनस्पति-विभाग में पहली बार एक गामा गार्डन स्थापित किया, जहाँ पौधों को गामा-किरणों द्वारा उपचारित किया जाता है। उन्होंने एक्सरे, गामा-किरणों, फास्ट और थर्मल-न्यूट्रान तथा बीटा-कणों के अलावा उत्परिवर्तन पैदा करने वाले अनेक रसायनों का इस हद तक प्रयोग किया है कि वे भली-भाँति जानते हैं, कि किस पौधे पर कौन-से विकिरण का उपयोग जरूरी (वांछनीय) होगा।

गेहूँ के साथ बड़ी खिलवाड़ की गई है। किसी भी एक जाति के पौधों पर विकिरण डालकर, उनसे बाकी ज्यादातर जातियों को पैदा कर लिया है। यह कुछ ऐसी ही बात है जैसे कोई बिल्ली से शेर, चीता वगैरह सभी सजातीय जानवर पैदा कर दे।

कुछ वर्षों पहले विकिरण द्वारा ही गेहूँ की एक किस्म पैदा की गई है जिसकी बालें शाखाओं में बँटी होती है। यानी जितने दाने पहले तीन बालों पर पैदा होते थे, उतने अब एक ही बाल से निकल आएँगे। एन. पी. (न्यू. पूसा) 799 किस्म की बालें सीकुर विहीन होती थी, उस पर डा. स्वामिनाथन ने ही गामा-किरणों के द्वारा उत्परिवर्तन पैदा करके एक सीकुर युक्त किस्म पैदा कर दी है–एन.पी. 836.

तीस-पैंतीस साल पहले मोर्गन और मुसर जैसे कुछ लोगों ने मक्खी मारते-मारते जीव विज्ञान की इस नई शाखा-अनुवंशिकी की नींव रख दी थी। उस मक्खी-ड्रोसोफिला मेलानोगेस्टर को आज "अनुवंशिकी की रानी" कहा जाता है, जिस पर बेहद प्रयोग किए गए हैं। कोई नहीं बता सकता कि कुल कितनी मक्खियां मारी जा चुकी होंगी। इन्हीं मक्खियों की बदौलत हमारी जानकारी इतनी बढ़ी है कि आज हम जानते है कि आदमी के कुल 46 गुणसूत्रों में से प्रत्येक गुणसूत्र पर 40,000,000,000 से अधिक न्युकिलआटाइडों के जोड़े होते हैं जो उसके समस्त गुणों का निर्धारण करते हैं।

मूसा बैल और टटेरे की गाड़ी

गाँव में, गाँव की शाला में,
एक हलचल शुरू होने लगी है।
21 वीं सदी में कुछ होते है चमत्कार,
टेक्नोलाजी, कम्प्यूटर, टी.वी. प्रोजेक्टर,
स्लाइड्स प्रगति के औजार।
इन चमत्कारों की होड़ में और दौड़ में
भाग लेने के लिये हमारे पास है,
टटेरे की गाड़ी और मूसा बैल।

–एम. एल. नागेश "दीप" मा. शा. ताकू

पहेलियां

जरा सिर तो खुजलाइये

1. नदी की चाल :

यह पहेली हमें श्रीमती सुनन्दा सागरकर (नरवर) से प्राप्त हुई है।

एक नाव स्थिर जल में 7 कि. मी. प्रति घंटे की चाल से जाती है। नदी के बहाव के साथ उसकी चाल, नदी के विरुद्ध उसकी चाल की $2\frac{1}{2}$ गुनी है। तो नदी की बहने की चाल क्या है?

2. एक गोले के टुकड़े :

एक गोल आकार को चार सीधी रेखाओं का उपयोग करके अधिक से अधिक कितने भागों में बाँटा जा सकता है?

3. वजनदार सवाल :

यह सवाल भी आसान ही है मगर शायद कुछ समय अधिक ले।

अगर तुम्हारे पास एक तराजू है, तो एक से लेकर चालीस कि. ग्रा. तक के वजन तौलने के लिये कम से कम कितने बाँट चाहिये? और इन बाँटों का वजन कितना होगा?

4. और पैसे भेजिये :

शायद आपको यह प्रश्न नये प्रकार का लगे मगर है यह भी आसान। इसे सुलझाने के लिये आप की तर्क शक्ति और कुछ तुक्केबाजी दोनों का ही उपयोग करना पड़ेगा।

हर अक्षर की जगह पर एक अंक बताइये जिससे कि दिया हुआ जोड़ ठीक से हो जाये। एक अक्षर एक ही अंक को दर्शाता है।

```
   S E N D
 + M O R E
 ---------
 M O N E Y
```

5. बंटी को एक दिन खेलते-खेलते पुष्टे का एक बड़ा त्रिभुजाकार (तिकोना) टुकड़ा मिला। बंटी ने उसे उठाकर घर ले जाने की कोशिश की परन्तु वह उससे नहीं उठ सका। क्योंकि वह काफी भारी था। परन्तु बंटी था कि, उसे घर ले ही जाना चाहता था। कुछ देर सोचने के बाद उसके दिमाग में एक तरकीब सूझी कि, क्यों न इस पुष्टे के टुकड़े कर लिये जाएँ। जिससे इसे उठाने में सहायता होगी। उसी क्षण वह घर गया और एक आरी उठा कर ले आया। उसने उस बड़े तिकोने टुकड़े के नौ छोटे तिकोने टुकड़े कर दिए। बंटी अब बहुत खुश था। वह एक-एक कर उन टुकड़ों को घर ले गया। घर के आँगन में वह उन टुकड़ों को जमाकर बड़ा तिकोन बनाने लगा। सभी टुकड़े जमाने के बाद उसने गोंद से उन्हें जोड़ दिया।

बंटी ने इस प्रकार टुकड़े काटे

परन्तु यह क्या. . .बंटी उसे जिस दिशा में रखना चाहता था उससे ठीक उल्टी दिशा में वह टुकड़ा रखा गया था। अब बंटी के लिये वह बड़ा तिकोन भी उठाना संभव नहीं था क्योंकि वह भारी हो गया था। बंटी ने फिर उसके टुकड़े कर सीधा करने की सोची परन्तु उसके पास केवल तीन छोटे टुकड़े जोड़ने लायक ही गोंद बची थी। अत: वह सोचने लगा कि इनमें से कौन से तीन टुकड़े उठाकर इस प्रकार रखे जाएँ कि, बड़े तिकोन की दिशा पहले जैसी हो जावे।

क्या तुम बंटी की इस मामले में कुछ मदद कर सकते हो? —विवेक पारस्कर

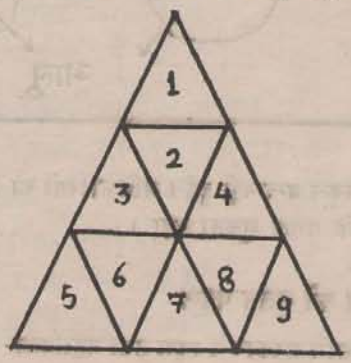

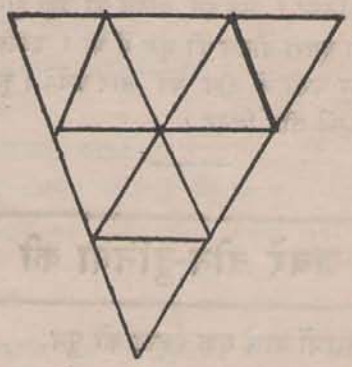

बंटी ने इस प्रकार घर लाकर जमाये

पिछले अंक की पहेलियों के हल

1. रफ्तार का बढ़ना :

सफर की कोई दूरी मान लीजिए। उदाहरण के लिये अगर वह तीस कि.मी. है, तो सफर का आधा हिस्सा 15 कि.मी. प्रति घंटे की रफ्तार से एक घंटे में पूरा होगा। मगर पूरे सफर में औसत रफ्तार तीस कि.मी. प्रति घंटा होने के लिये आवश्यक है कि पूरा सफर एक घंटे में समाप्त हो जाये। जो यहाँ संभव नहीं है। इसलिये इस पहेली का कोई हल नहीं है।

2. समझदार दूधवाला :

इस पहेली का सही उत्तर हमें आराधना नागेश कक्षा 6 वीं केसला से मिला है जिसके लिये हम आराधना और उनके माता पिता को भी बधाई देते हैं। उत्तर इस प्रकार है:–

पहले तीन लीटर वाले नपनाघट से दूध

लेकर 5 लीटर वाले नपनाघट में डालो। यही क्रिया पुनः करने से 5 लीटर वाले नपनाघर में 2 लीटर दूध और आ जायेगा व शेष 1 लीटर दूध छोटे नपनाघट में बचेगा। अब 5 लीटर वाले नपनाघट से दूध पूरा बाल्टी में डालकर छोटे नपनाघट का दूध उसमें (5 लिटर वाले नपनाघट में) डाले। अब 3 लिटर वाला नपनाघट खाली होगा और 5 लीटर वाले नपनाघट में दूध भरकर बड़े नपनाघट में डाल दीजिये जिससे उसमें चार लिटर दूध हो जायेगा।

3. रेखाओं का चक्कर :

इस पहेली को देने में हमने एक गलती कर दी थी। ऐसी रेखा जो दिये हुए सभी 9 बिन्दुओं से गुजरें हमें बिना कलम उठाये खेंचनी है। कलम न उठाने वाली बात हम कहना भूल गये थे। शायद आप अब फिर से इस प्रश्न को हल करना चाहें।

4. इस प्रश्न का उत्तर है तीन घंटे और तीन मिनट। एक बार जब पहली बोतल के अमीबा ने एक और अमीबा बना लिया तो उसमें भी दो अमीबा हो गये। इस बात को होने में लगे तीन मिनट। अब इस बोतल की वही हालत है जो दूसरी बोतल की शुरू में थी। इसलिए बोतल भरने में तीन घंटे और लगेंगे। कुल तीन घंटे तीन मिनट।

आलू से बिजली

जी हाँ, आलू से बिजली। अच्छा भाई नहीं मानते तो चलो करके देख लेते हैं। 1॥ सेमी. चौड़ी और 9 सेमी. लम्बी जस्ते की कम से कम दस पत्तियाँ लो। जस्ता हार्डवेयर (जहाँ लोहे का सामान मिलता है) की दुकान पर अवसर मिल जाता है। इन सभी को जोड़ने के लिए 70 सेमी. पतला तांबे का तार टार्च का बल्ब और आलू (ध्यान रहे आलू मुरझाये हुए न हों) ले लो। चित्र के अनुसार अब प्रत्येक आलू में एक-एक जस्ते की और ताँबे की पत्ती लगा लो। अब इन्हें तारों से जोड़ दो। तार के दो खुले छोरों को टार्च के बल्ब से जोड़ दो। इसे जोड़ते ही बल्ब जल उठेगा। सोचो और बताओ कि आलू में जस्ते और तांबे की छड़ घुसाने पर बल्ब क्यों जलता है ? अपना उत्तर कारण सहित लिख भेजो जिसे हम अगले अंक में छाप सकें।

नोटः—यहाँ चित्र में केवल तीन आलू ही दिखाए गये हैं, परन्तु प्रयोग कम से कम दस आलू से करना होगा।

"एकलव्य" धार

—सुनीलकुमार शर्मा

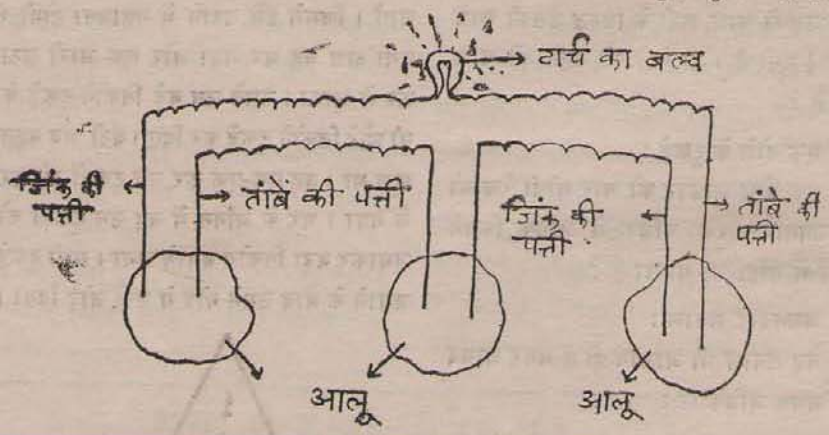

खबरें दीन-दुनिया की

दो छात्रों वाले एक स्कूल को पुनः जीवन दान

स्कॉटलैण्ड के पूर्वी तट से दूर आउट स्केरीज द्वीप समूह पर स्थित ब्रिटेन का सब से छोटा माध्यमिक स्कूल चलता रहेगा। द्वीप की कुल आबादी 90 है तथा विद्यालय की छात्र संख्या दो। 1 अध्यापक है जो अंशकालीन पादरी भी है।

शिक्षा अधिकारी इस विद्यालय को बन्द करना चाहते थे और चाहते थे कि दोनों छात्रों को लेरविक शहर के विद्यालय में भेज दिया जाए जो तीन घंटे की नाव यात्रा की दूरी पर है। पर स्कूल बन्द नहीं हुई। अधिकारियों को जनमत के समक्ष झुकना पड़ा।

आसाम की नूतन पहल

आसाम सरकार ने स्कूल तथा महाविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में परिवर्तन के सुझाव देने के लिए एक शिक्षा सुधार आयोग का गठन किया है। इसके अलावा यह आयोग प्रदेश के खास-खास स्वतन्त्रता सेनानियों को भी चुनेगा जिनको प्रदेश के विद्यालयों में स्वतन्त्रता संग्राम के बारे में शिक्षा देने का भार सौंपा जायेगा।

विशेष विद्यालय—
शिक्षात्मक या दण्डात्मक

लंदन के एक सम्मेलन की रिपोर्ट के अनुसार मंद बुद्धि बालकों के अभिभावकों का विचार है कि विशिष्ट विद्यालय उनके बालकों के लिए एक प्रकार का दण्ड है। शिक्षाविदों को यह बात समझ में नहीं आती, न उन्हें यह पता है कि अभिभावक ऐसे विद्यालयों को हेय दृष्टि से देखते हैं। अभिभावकों के विचार से इस प्रकार के विद्यालय इन बालकों को समाज से काटते हैं। और यह पृथक्करण, अलगाव को बढ़ावा देता है। शहर के 4 विद्यालयों में मंद बुद्धि छात्रों को साधारण छात्रों के साथ पढ़ाने के प्रयोग से पता चला कि ऐसे मंद बुद्धि छात्र भी साधारण स्कूलों में शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं।

⊂:O:⊂

प्रौढ़ शिक्षा

—धूमिल

काले तख्ते पर सफ़ेद खड़िया से
मैं तुम्हारे लिए लिखता हूँ–'अ'
और तुम्हारा मुख
किसी अन्धी गुफा के द्वार की तरह
खुल जाता है—'आऽऽ !'

यह भविष्य है यानी कि शब्दों की दुनिया में
आने की सहमति । तुमने पहली बार
बीते दिनों की यातना के खिलाफ़
मुँह खोला है

और यह उस आदमी का भविष्य है जिसका
गूँगापन
न सिर्फ़ आत्महत्या की सरहद पर बोलता है
मुहावरों के हवाई हमले से बचने के लिए
जिसके दिमाग़ में शताब्दियों का अन्धा कूप है

जो खोये हुए साहस की तलाश में
पशुओं की पूँछ के नीचे टटोलता है
जो किताबों के बीच में
जानवर-सा चुप है
यह उस आदमी का भविष्य है जो अचानक,
टूटते-टूटते, इस तरह तन गया है
कि कल तक जो मवेशीखाना था उसके लिए
आज पंचायत-भवन बन गया है

लालटेन की लौ जरा और तेज करो
उसे यहाँ—
पेड़ में गड़ी हुई कील से
लटका दो
हाँ—अब ठीक है
आज का सबक़ शुरू करने से पहले
मैं एक बार फिर वह सब बतलाना चाहूँगा
जिसे मैंने कल कहा था
क्योंकि पिछले पाठ का दुहराना
हर नयी शुरुआत में शरीक है

कल मैंने कहा था कि वह दुनिया
जिसे ढँकने के लिए तुम नंगे हो रहे थे
उसी दिन उघर गयी थी
जिस दिन हर भाषा
तुम्हारे अँगूठा-निशान की स्याही में डूबकर
मर गयी थी

तुम अपढ़ थे
गँवार थे
सीधे इतने कि बस—
'दो और दो चार' थे

मगर चालाक 'मुराजिये'
आज़ादी के बाद के अँधेरे में
अपने पुरखों का रंगीन बलगम
और ग़लत इरादों का मौसम जी रहे थे
अपने-अपने दराज़ों की भाषा में बैठकर
'गर्म कुत्ता' खा रहे थे
'सफ़ेद घोड़ा' पी रहे थे

उन्हें तुम्हारी भूख पर भरोसा था
सब से पहले उन्होंने एक भाषा तैयार की
जो तुम्हें न्यायालय से लेकर नींद से पहले की–
प्रार्थना तक, ग़लत रास्तों पर डालती थी
'वह सच्चा पृथ्वी पुत्र है'
'वह संसार का अन्नदाता है'

मगर तुम्हारे लिए कहा गया हर वाक्य
एक धोखा है जो तुम्हें दलदल की ओर
ले जाता है

लहलहाती हुई फ़सलें...
बहती हुई नदी...
उड़ती हुई चिड़ियाँ...
यह सब, सिर्फ़, तुम्ह गूँगा करने की चाल है
क्या तुमने कभी सोचा कि तुम्हारा—
यह जो बुरा हाल है
इसकी वजह क्या है ?

इसकी वजह वह खेत है
जो तुम्हारी भूख का दलाल है
आह ! मैं समझता हूँ कि यह एक ऐसा सत्य है
जिसे सकारते हुए हर आदमी झिझकता है
मगर तुम खुद सोचो कि डबरे में
डूबता हुआ सूरज
खेत की मेड़ पर खड़े आदमी को
एक लम्बी परछाई के सिवा और क्या दे
सकता है

काफ़ी दुविधा के बाद
मुझे यह सचाई सकारनी पड़ी है
यद्यपि यह सही है कि सूरज
तुम्हारी जेब-घड़ी है
तुम्हारी पसलियों पर
मौसम की लटकती हुई जंजीर
हवा में हिलती है और
पशुओं की हरकतों से
तुम्हें आने वाले खतरों की गन्ध
मिलती है
लेकिन इतना ही काफ़ी नहीं है
इसीलिए मैं फिर कहता हूँ कि हर हाथ में
गीली मिट्टी की तरह—हाँ-हाँ—मत करो
तनो
अकड़ो
अमरबेलि की तरह मत जियो,
जड़ पकड़ो

बदलो—अपने-आपको बदलो
यह दुनिया बदल रही है
और यह रात है, सिर्फ़ रात...
इसका स्वागत करो

यह तुम्हें
शब्दों के नये परिचय की ओर लेकर
चल रही है ।

'संसद से सड़क तक' से –साभार

डाक पंजीयन क्र. J2-MP/33/14

मध्यप्रदेश में सिंचाई सुविधाओं का विस्तार

- सातवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि में प्रदेश शासन द्वारा निर्माणाधीन सिंचाई योजनाओं को पूरा करने पर विशेष बल ।

- सिंचाई क्षमता में वृद्धि के लिए आगामी पाँच वर्षों में नौ बहुउद्देशीय परियोजनाएँ, सत्रह बड़ी योजनाएँ, चवालिस मध्यम योजनाएँ और एक हजार छह सौ छिहत्तर छोटी सिंचाई योजनाओं पर काम करने का निर्णय । अगले पाँच वर्षों में प्रदेश की सिंचाई क्षमता में सात लाख तीस हजार हेक्टेयर की वृद्धि का लक्ष्य ।

- निर्मित सिंचाई क्षमता के पूरे उपयोग के लिए सिंचाई योजनाओं के कमाण्ड क्षेत्र में सिंचाई-नालियों और जल-निकास-नालियों के निर्माण की योजना ।

- सिंचाई का सही उपयोग कर उत्पादन बढ़ाने का प्रशिक्षण देने के लिए भोपाल में जल एवं भू-प्रबन्ध संस्थान की स्थापना ।

- प्रदेश में कुओं द्वारा सिंचाई को प्रोत्साहित करने के लिए हरिजनों, आदिवासियों और दो हेक्टेयर तक के खातेदार छोटे किसानों के लिए सिंचाई कुँआ बीमा योजना शुरु करने का निश्चय । इस योजना के तहत ऐसे किसानों को लागत वापस मिल सकेगी जिनके कुएँ असफल हो जाते हैं ।

किसानों की खुशहाली के लिए कटिबद्ध सरकार

सू. प्र. सं. 8800683/85.

सहयोग राशि : एक रुपया

एकलव्य, E-1/208, अरेरा कॉलोनी, भोपाल द्वारा प्रकाशित एवं नईदुनिया प्रिन्टरी, इन्दौर द्वारा मुद्रित ।